सत् - शास्त्र प्रकाशन

विद्वद्वर्य श्रीबोपदेवकृत

हरि - लीला

[श्रीमद्भागवतकी अनुक्रमणिका रूपा]

हिन्दी भाषान्तर

श्रीसुदर्शनसिंह 'चक्र'

सत् - शास्त्र प्रकाशन

विद्वद्वर्य श्रीबोपदेवकृत

हरि - लीला

[श्रीमद्भागवतकी अनुक्रमणिका रूपा]

हिन्दी भाषान्तर
श्रीसुदर्शनसिंह 'चक्र'

विद्वद्वर्य श्रीबोपदेव विरचित

हरि - लीला

श्रीमद्भागवतकी अनुक्रमणिका रूपा

परम श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमान प्रसादजी पोद्दार एवं श्रीरामकृष्णजी डालमियाकी पावन स्मृतिमें ।

हिन्दी भाषान्तर

श्रीसुदर्शनसिंह 'चक्र'

प्रकाशक

सत् शास्त्र प्रकाशन

श्रीकृष्ण-जन्मस्थान-सेवा-संस्थान

मथुरा-२८१००१ (उ० प्र०)

प्रकाशन तिथि

मार्गशीर्ष शुक्ल ५, वि. सं. २०३६

२४ नवम्बर, १९७९

मुद्रक

राधाप्रेस

गांधीनगर, दिल्ली-११००३१

प्रथम संस्करण—५०० प्रतियां **मूल्य—दो रुपये**

यह पुस्तक भारत सरकार द्वारा रियायती मूल्यपर उपलब्ध किये गये कागजपर मुद्रित-प्रकाशित है ।

आवश्यक निवेदन

अत्यन्त लीलामय है अपना कन्हाई। यह स्वयं कब क्या करेगा, इसका तो पता कोई क्या पावेगा, यह भी ठिकाना नहीं कि वह आपसे क्या करा डालेगा।

मुझपर तो बाल्यकालसे ही स्नेह है अनन्त श्रीस्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराजका। मैं उनकी श्रीमद्भागवत-कथाका तबसे श्रोता हूँ, जब वे पं० शान्तनुविहारी द्विवेदी थे और महराई (ग्राम) रहते थे। उस समय तक उन्होंने कुछ संक्षिप्त सप्ताह-कथा भले की हो, श्रीमद्भागवत-का प्रवचन नहीं प्रारम्भ किया था। श्रीमद्भागवतके प्रायः एक अध्यायका अर्थ एक दिनमें—एक घण्टेके लगभग समयमें सुना देनेका उनका क्रम घरपर मेरे लिए प्रारम्भ हुआ और उनकी माताजी ही दूसरे श्रोताके रूपमें थीं।

अनेक बार श्रीस्वामीजीके श्रीमुखसे मैंने सम्पूर्ण भागवत-कथा सुनी। कथा-प्रसङ्गमें वे स्कन्धोंकी अध्याय-सङ्गति श्रीवल्लभाचार्यजीके अनुसार लगाते हैं और इस प्रसङ्गमें प्रायः बोपदेवजीके इस 'हरि-लीलामृत' ग्रन्थका नाम लेते हैं। अतः इस ग्रन्थके प्रति मेरी उत्सुकता जागृत होना स्वाभाविक है।

डा० बालचन्द्रिका पाठक एम. ए., पी. एच. डी. (एटा) ने जब डी. लिट्के लिए 'श्रीरामचरितमानस' एवं श्रीमद्भागवतका तुलनात्मक अध्ययन' शोध-प्रबन्धके लिए चुना तो आधार-सूचीमें बोपदेवजीका भी नाम दिया। फलतः बोपदेवजीके ग्रन्थोंको ढूंढ़नेमें उनकी सहायताके उद्देश्यसे मैं भी लगा। इसी प्रयत्नमें यह पुस्तक देखनेका सुअवसर प्राप्त हुआ।

इस पुस्तककी दो प्राचीन प्रतियाँ दो स्थानोंसे छपी मुझे प्राप्त हुईं। दोनों ही अत्यन्त जीर्ण हैं। अब अप्राप्य हैं। दोनों ही वृन्दावनके श्रीपूर्णानन्द पुस्तकालय, उड़िया बाबाका आश्रम, दावानल कुण्डमें सुरक्षित हैं।

इनमें-से एक प्रतिमें पुस्तक का नाम 'हरि-लीला' है और दूसरीमें 'हरि-लीलामृत' लेकिन इस दूसरी प्रतिकी भी अन्तिम द्वादश स्कन्धकी पुष्पिका है—

इति श्रीभागवते महापुराणे बोपदेव विरचिता 'हरिलीलानुक्रमणी समाप्ता।'

अहो नृलोके पीयेत हरि-लीलामृतं वचः ॥ भा. १.१६.८

इस प्रकार पुस्तकका नाम 'हरि-लीला' ही सिद्ध होता है। अतः मैंने भी यही नाम स्वीकार किया है।

यहाँ इन दोनों प्रतियोंका परिचय देना अप्रासंगिक न होगा, क्योंकि दोनोंके प्रकाशकोंको हस्तलिखित प्रतियाँ ही मिली थीं। दोनोंके पाठोंमें बहुत कम अन्तर है। दोनोंमें संस्कृत टीका है। एक ही टीका दोनोंमें है; किंतु टीकाकारका नाम दोनों प्रतियोंमें भिन्न-भिन्न है।

मैंने प्रायः पाठ जिससे लिया है, वह हरिलीलाकी प्रति सं० १९६३ वि० में श्रावणी पूर्णिमाको श्रीदेवकीनन्दन मुद्रणालय वृन्दावनमें छपी थी।

सम्भवतः बोपदेवने इस नामकी प्रेरणा भी मूलतः श्रीमद्भागवतसे पायी थी।

श्रीरामानुजमतानुयायी श्रीबालकृष्णात्मज श्रीलक्ष्मीनाथजीकी टिप्पणी पुस्तकमें ही है कि— 'भट्ट पुरुषोत्तम वैष्णवके पूर्वपुरुषोंने अपने और विद्वानोंके देखनेके लिए इस ग्रन्थकी प्रतिलिपि की थी। यह एक ही प्रति पौराणिक पुरुषोत्तम भट्टके पास थी। उसे लाकर मैंने श्रीनित्यस्वरूप ब्रह्मचारीको देकर मुद्रित कराया।' यह टिप्पणी संस्कृतमें है।

'वंगदेशीय ताडास नरेश श्रीवनमाली रायबहादुरकी सम्पूर्ण आर्थिक सहायतासे परमहंस परिव्राजकाचार्य स्वामी श्रीमत् प्रकाशानन्द सरस्वतीके शिष्य श्रीनित्यस्वरूप ब्रह्मचारीने इस ग्रन्थका सम्पादन किया और अपने ही श्रीदेवकीनन्दन मुद्रणालयसे मुद्रित कराया।'

इसके संशोधकके स्थानपर पं० श्रीभागवताचार्यजीका नाम है।

प्राचीन वैष्णव ग्रन्थोंके जीर्णोद्धारकी अभीप्सासे श्रीनित्यस्वरूप ब्रह्मचारी इस प्रकाशन-कार्यमें लगे थे। उन्होंने अनेक ग्रन्थ प्रकाशित किये। उसीमें श्रीमद्भागवतकी अष्ट-टीका और यह 'हरि-लीला' भी है। वृन्दावनके श्रीपूर्णानन्द पुस्तकालयमें उस अष्ट-टीकाकी अन्तिम जिल्दमें यह पुस्तक भी बँधी है।

पुस्तकके ऊपरका नाम इस प्रकार है—

श्रीबोपदेवकृता

श्रीहरिलीला

"श्रीहेमाद्रिकृता—हरिलीला - विवेकाऽऽख्यटीकया संवलिता
पूज्यपाद महर्षि श्रीवेदव्यास प्रणीत
श्रीमद्भागवत महापुराणानुक्रमणिका रूपा।

शास्त्र - स्कन्ध - प्रकरणाऽध्याय - वाक्य - पदाऽक्षरेषु
सप्तस्वाद्यचतुष्काभिधेय प्रतिपादनपरा राजमान्य वैष्णवप्रवर
लश्कर नगरस्थ पौराणिक तैलंग-भूसुरालंकारभट्ट
श्रीपुरुषोत्तम शास्त्रि सकाशादधिगता।"

इस प्रतिका मुद्रक प्रेस, प्रकाशकादि अब कुछ नहीं है।

दूसरी प्रति वाराणसीके प्रसिद्ध संस्कृत प्रकाशक 'चौखम्बा संस्कृत-ग्रन्थ माला' द्वारा प्रकाशित है। इसपर ग्रन्थ-संख्या ७१ और नं० ४११ पड़ा है। प्रकाशक हैं—श्रीजयकृष्णदास-हरिदास गुप्त। विद्याविलास प्रेस बनारस सिटीसे सं० १९९० वि. में यह छपी है।

इस प्रकार वृन्दावनसे छपी प्रति इस प्रतिसे २३ वर्ष पुरानी है।

इस पुस्तकपर नामादि इस प्रकार छपे हैं—

विद्वच्छिरोमणि श्रीबोपदेवप्रणीतं—

हरिलीलामृतम्

श्रीमत् परमहंस शिरोमणि मधुसूदन सरस्वती प्रणीत टीका सहितम्।
तत्प्रणीत परमहंस प्रियाख्य व्याख्यायुतं श्रीमद्भागवत स्याद्यं पद्यंच।
नेपालस्थ राजकीय संस्कृत प्रधान पाठशालाध्यापकैः
साहित्योपाध्यायैः पराजुल्युपनामक पण्डितप्रवर
श्रीदेवीदत्तोपाध्यायैः संसोधितम्।

पुस्तकके अन्तमें पुष्पिका है—

इति श्रीभागवते महापुराणे मधुसूदन सरस्वती विरचितायां
हरि-लीला टीकायां द्वादश स्कन्धः समाप्तः।

पुस्तककी आधार-प्रति प्राप्तिका कोई उल्लेख नहीं है। पुस्तकके संशोधकसे ही सम्भवतः प्रति मिली है।

दोनों पुस्तकोंके दो नाम हैं ; किंतु 'हरिलीलामृत' की भी अन्तिम पुष्पिकामें 'हरि-लीला' नाम ही है।

सबसे विचित्र बात है कि वृन्दावनसे छपी प्रतिकी संस्कृत-टीकाके टीकाकारका नाम हेमाद्रि दिया गया है और वाराणसीसे छपी 'हरिलीलामृत' में जो संस्कृत टीका है, उसके टीकाकारका नाम श्रीमधुसूदन सरस्वती दिया गया है ; किंतु दोनोंमें टीका वही है। अतः टीकाकार कौन हैं—यह बात संदिग्ध हो गयी है।

वृन्दावनसे छपी प्रतिमें श्लोकोंको श्लोकोंके रूपमें न देकर पाद-पाद खण्डशः दिया गया है और उनके साथ उनकी टीका दी गयी है।

वाराणसीसे छपी प्रतिमें श्लोक सम्पूर्ण छपे हैं। कहीं-कहीं अनेक श्लोक एक साथ छपे हैं और तब उनकी टीका दी गयी है।

दोनों प्रतियोंके मूलमें पाठ-भेद भा थोड़ा है ; किंतु वृन्दावनकी प्रतिका मूल पाठ टीकाके अनुसार है। जब कि वाराणसीकी प्रतिका मूल भिन्न है और टीकाके परिवर्तन होनेसे टीका पृथक् पड़ गयी है।

मैंने श्लोकोंको पदोंमें नही बाँटा। इससे मूलको पढ़नेमें सुविधा होती है। हिन्दी भाषान्तर मैंने संस्कृत टीकाके आधारपर किया है। वह टीका हेमाद्रिकी हो या श्रीमधुसूदन सरस्वतीकी, अतः कोष्ठककी संख्याएँ तथा स्पष्टीकरण संस्कृत टीकाके अनुसार हैं*।

सुना तो यह भी गया है कि श्रीबोपदेवजीने श्रीमद्भागवतकी पूरी टीका की थी और उसकी प्रति कहीं वृन्दावनमें थी ; किंतु उसे किसी विदेशीने प्राप्त कर लिया। प्रयत्न करके भी अधिक विवरण नहीं मिला।

श्रीबोपदेवजीकी दूसरी पुस्तक 'मुक्ताफल' है। इसमें बोपदेवजीके तो केवल ११ श्लोक हैं—आदि-अन्तमें। शेष भागवतके ही श्लोकोंका उन्होंने चयन किया है। इसपर भी हेमाद्रिकी टीका है। अतः हरि-लीलाकी संस्कृत टीका हेमाद्रिकी ही हो, यह सम्भावना अधिक है।

---

* 'हरिलीला' हेमाद्रिकी प्रसन्नताके लिए लिखी गयी। हेमाद्रिने उसपर टीका की—उससे श्रीबोपदेवजी सहमत ही होंगे। अतः ग्रन्थका अर्थ टीकाके अनुसार ही उचित है।

श्रीबोपदेवजी 'चतुर्वर्ग चिन्तामणि' जैसे धर्मशास्त्र ग्रन्थके प्रसिद्ध लेखक हेमाद्रिके समकालीन थे। हेमाद्रिके संतोषके लिए ही उन्होंने 'हरि-लीला' लिखी, यह बात हरि-लीलाके प्रथम श्लोकमें ही है।

बोपदेवजीके मुग्ध-बोध नामक संस्कृतका व्याकरण-ग्रन्थ तथा कवि कल्पद्रुम आदि अन्य ग्रन्थ भी हैं। भागवत-तत्त्व प्रकट करनेको उन्होंने तीन ग्रन्थ लिखे—यह बात संस्कृत टीकाके अन्तमें दी गयी है। इनमें-से एक 'हरि-लीला' है और दूसरा 'मुक्ताफल' है।

चिकित्साग्रगण्य श्रीकेशवजीके ये पुत्र और भिषक्शिरोमणि धनेशजीके शिष्य थे। वरदा नदीके तटपर सार्थ नामक स्थानमें इनका जन्म हुआ था। कविकल्पद्रुमके अन्तमें इन्होंने अपना यह परिचय दिया है। इनके ग्रन्थोंकी नामावली जो ग्रन्थोमें मिलती है, इस प्रकार है—

१. हरिलीला—इसका नाम हरिलीलामृत, हरिलीलाविवरणम्, भागवतस्यानुक्रमणिका भी है।

२. मुक्ताफल।

३. भागवतसारः—इसका नाम मुकुट या भागवतादर्श भी है।

४. मुग्धबोध व्याकरण।

५. कविकल्पद्रुम—इसमें धातु पाठ है।

६. काव्यकामधेनु धातुवृत्ति।

७. बोपदेव वैद्यशतकम्। इसे शतश्लोकी भी कहते हैं।

कुछ और ग्रन्थोंकी भी चर्चा संस्कृत-टीकामें इस प्रकार है—

यस्य व्याकरणे वरेण्य घटनास्फीताः प्रबन्धा दश
प्रख्याता नव वैद्यकेऽथ तिथिनिर्धारार्थमेकोऽद्भुतः।
साहित्ये त्रय एव भागवत-तत्त्वोक्तौ त्रयस्तस्य च
भूगीर्वाणशिरोमणेरिह गुणाः के के न लोकोत्तराः॥

बंगलामें लिखे गये संस्कृत साहित्यके इतिहासमें उसके लेखक श्रीजाह्नवीचरण बी. ए., बी. एल. महोदयके अनुसार देवगिरिके राजा रामचन्द्रका राज्यकाल (१२६०-१२७२ ई०) है। हेमाद्रि राजा रामचन्द्रके मन्त्री थे। अतः बोपदेवजीका भी यही समय प्रमाणित होना चाहिये।

'मुक्ताफल' तो मिल गया है। उस पर यथावसर विचार होगा। भागवतसार या भागवतादर्शकी खोज की जायगी। पाठकोंमें-से यदि किन्हींको पता लगे तो वे सूचना देनेकी कृपा करें।

हिन्दी भाषान्तरके सम्बन्धमें मुझे कुछ कहना नहीं है। बहुत साधारण-सरल भाषान्तर करनेका प्रयत्न किया है मैंने।

श्रीबोपदेवजी भगवान् विष्णुके नैष्ठिक भक्त एवं उद्भट विद्वान् थे। *श्रीमद्भागवतके प्रति उनकी अपार श्रद्धा थी। उन्होंने भागवतका कितना गम्भीर अध्ययन किया था, यह उनके इन ग्रन्थोंसे स्पष्ट है।

आशा है, भागवतके प्रेमीजनों एवं विद्वानोंको यह प्रयास, प्रिय तथा उपयोगी लगेगा।

डा० श्रीगोवर्धननाथ शुक्लने इसका संशोधन किया। इसे देखा; किंतु वे इतने अपने हैं कि आभार उन्हें संकुचित ही करेगा।

—सुंदर्शन सिंह

श्रावणी पूर्णिमा—सं० २०३६

* महर्षि दयानन्दने तो श्रीमद्भागवत ग्रन्थको बोपदेवका लिखा ही मान लिया था, जिससे एक बड़े भ्रमका सूत्रपात हो गया था। भगवान्‌को कोटिशः धन्यवाद है कि इस भ्रमका निरसन स्वयं बोपदेवजीके ग्रन्थोंसे ही हो जाता है।

हरि-लीला

[श्रीबोपदेव-कृत]

श्रीमद्भागवतस्कन्धाऽध्यायार्थादि निरूप्यते ।
विदुषा बोपदेवेन मन्त्रिहेमाद्रितुष्टये ।। १ ।।

श्रीमद्भागवत, उसके स्कन्ध अध्याायादिका प्रयोजन निरूपण विद्वान् बोपदेव (देवगिरि-नरेश रामचन्द्रके) मन्त्री हेमाद्रिकी सन्तुष्टिके लिए करते हैं।

आनन्दस्य हरेर्लीला वक्ता भागवतागमः ।
स्कन्धैर्द्वादशभिः शाखाः प्रतन्वन् द्विजसेविताः ।। २ ।।

आनन्दस्वरूप श्रीहरिलीलाका वर्णन करनेवाला महापुराण श्रीमद्भागवत द्विजों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यरूपी अथवा भक्तरूपी पक्षियों) से सेवित कल्पवृक्ष है। यह द्वादश स्कन्धरूपी अपनी शाखाओंका विस्तार किये है।

सा च द्वितीयदशमे दशधाऽदर्शिता यथा ।
'अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थानं पोषणमूतयः ।
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधो मुक्तिराश्रयः ।।'
सर्गादयस्तृतीयादि स्कन्धेषूक्ता दश क्रमात् ।। ३-४ ।।

इस लीलाका वर्णन (भागवतके) द्वितीय स्कन्धके दशम अध्यायमें इस प्रकार किया गया है कि— 'इस ग्रन्थमें सर्ग, विसर्ग, स्थान, पोषण, ऊति मन्वन्तर, ईशानुकथा, निरोध, मुक्ति और आश्रयका वर्णन है।' इनमें-से तृतीय स्कन्धसे प्रारम्भ करके (सर्ग, विसर्गादि) दश लक्षण क्रमशः (द्वादश स्कन्ध तक) हैं।

श्रोतुर्वक्तुश्च लक्ष्माऽऽद्ये द्वितीये श्रवणे विधिः ।
इतीदं द्वादशस्कन्धं पुराणं दश लक्षणम् ।। ५ ।।

प्रथम स्कन्धमें श्रोता और वक्ताका लक्षण है। द्वितीय स्कन्धमें श्रवण-विधि है। इस प्रकार बारह स्कन्धोंमें महापुराणके दश लक्षण हैं।

प्रथम स्कन्ध

प्रथमेऽष्टादशाध्यायास्तत्र प्रकरणत्रयम् ।
त्रि-त्रि-द्वादशभिः लक्ष्यहीनमध्योत्तम त्वतः ॥ ६ ॥

प्रथम स्कन्धमें अठारह अध्याय हैं* । उनमें तीन प्रकरण हैं। (श्रोताके तीन और वक्ताके तीन) तीनके क्रमसे छः-छः अध्यायोंमें लक्ष्य (श्रोता-वक्ता)हीन, मध्यम और उत्तम कहे गये हैं।

श्रोतारः शौनको व्यासः परीक्षिच्चोत्तमाः क्रमात् ।
वक्तारोऽपि तथा सूतो नारदो शुक इत्यमी ॥ ७ ॥

श्रोताओंमें शौनक, व्यास, परीक्षित क्रमशः उत्तम हैं और वक्ताओंमें सूत, नारद शुकदेवकी श्रेष्ठता भी वैसे ही क्रमशः है।

वैराग्यस्य प्रकर्षेण प्रकर्षोऽत्र विवक्षितः ।
तल्लक्षणः परः श्रोतुं वक्तुं चार्हति संहिताम् ॥ ८ ॥

यहाँ (श्रोताओं-वक्ताओंकी) श्रेष्ठता वैराग्यके उत्कर्षसे बतलाना अभीष्ट है। श्रोताओं और वक्ताओंका यह लक्षण (वैराग्य) संहिता श्रीमद्भागवतके अनुसार है।

पुराणेष्वितिहासैर्हि लक्षणादि निरूपणम् ।
वेदः पुराणं काव्यञ्च प्रभुर्मित्रं प्रियेव च ॥ ९ ॥
बोधयन्तीति हि प्राहुः त्रिविद् भागवतं पुनः ।

पुराणोंमें, इतिहास(महाभारत)में भी (श्रोता-वक्ताके) लक्षणादिका निरूपण प्राप्त है। स्वामीके समान (आदेश देकर) वेद, मित्रके समान (समझाकर) पुराण-इतिहासादि और प्रियाके समान (रसाभिभूत कराके) काव्यादि सन्मार्गका उपदेश देते हैं। ऐसा (नीतिके ग्रन्थोंमें) कहा गया है; किंतु भागवतमें ये तीनों ही शैलियाँ विद्यमान हैं।

---

*वर्तमान सभी प्रतियोंमें उन्नीस अध्याय हैं। श्रीधर स्वामीने भी उन्नीसों अध्यायों पर टीका की है। किन्तु आगे जो इन अध्यायोंका विषय-विवरण है, उनके अनुसार बोपदेवजी अध्याय एकादशको ग्रन्थका अंग नहीं मानते हैं अथवा अध्याय दस और ग्यारहको दो अध्याय न मानकर एक ही अध्याय स्वीकार करते हैं।

प्रकरणार्थ पूरा करके अब अध्यायोंका विषय कहते हैं—

पञ्च प्रश्नाः शौनकस्य सूतस्यात्रोत्तरं त्रिषु ।।१०।।

श्रीमद्भागवतके प्रथम स्कन्धके (प्रथम अध्यायमें) शौनकके पाँच प्रश्न हैं* । आगेके तीन अध्यायोंमें सूतजीका उत्तर है ।

अवतारप्रश्नयोश्च व्यासस्याऽनिर्वृतिः कृतात् ।
नारदस्याऽत्र हेतूक्तिः प्रतीत्यर्थे स्वजन्म च ।।११।।

**(३) अवतारके प्रश्नका उत्तर, (४) भगवान् व्यासका अपनी कृति (महाभारत)से असन्तोष, (५) देवर्षि नारद द्वारा असन्तोषके कारणका निरूपण और (६) विश्वास स्थिर करनेके लिए अपने पूर्वजन्म तथा वर्तमान-जन्म पानेका वर्णन,

सुप्तघ्नद्रौण्यभिभवः तदस्त्रात्पाण्डवावनम् ।
भीष्मस्य स्वपदप्राप्तिः कृष्णस्य द्वारकागमः ।।१२।।

(७) सोते बालकोंको मारनेवाले द्रोणपुत्र अश्वत्थामाका पराभव (८) और उसके ब्रह्मास्त्रसे पाण्डवोंकी रक्षा, (९) भीष्मपितामहकी अपने पद(मोक्ष)की प्राप्ति, (१०) श्रीकृष्णका (हस्तिनापुरसे द्वारिका) लौट आना ।

श्रोतुः परीक्षितो जन्म धृतराष्ट्रस्य निर्गमः ।
कृष्णमर्त्यत्यागसूचा ततः पार्थमहापथः ।।१३।।

---

*मूलग्रन्थमें प्रथम स्कन्धके प्रथम अध्यायमें पाँच प्रश्न हैं

१. पुरुषका ऐकान्तिक कल्याण किसमें है? (श्लोक९)।

२. चित्त निर्मल किस प्रकार हो ? (श्लोक ११)

३. श्रीकृष्णके अवतारका कारण (श्लोक १२)।

४. भगवानका सुयश (श्लोक १६)।

५. धर्म स्वयं किसीकी शरणमें गया ? (श्लोक २२)

**कोष्ठकके अंक अध्याय की क्रम संख्या के सूचक हैं अर्थात् किस अध्यायकी सूचना संकलित है ।

(*११) मुख्य श्रोता परीक्षितका जन्म, (१२) धृतराष्ट्रका (हस्तिनापुरसे) निर्गमन, (१३) श्रीकृष्णके मर्त्यलोकके त्यागकी सूचनाका शोक, (१४) उससे पाण्डवोंका महाप्रस्थान अर्थात् देहत्यागके लिए हिमालयकी महायात्रा,

भूधर्मयोः कलेर्भीतिः ततस्त्राणं परीक्षिता ।
परीक्षितो ब्रह्मशापः प्रायोऽस्य शुकसङ्गमः ॥१४॥

(१५) पृथ्वी और धर्मको कलियुगसे भय, (१६) उस भयसे परीक्षित द्वारा रक्षा, (१७) परीक्षितको ब्राह्मण-कुमारका शाप, (१८) परिणामतः परीक्षितका अनशन और शुकदेवजीका समागम।

इत्यष्टादशभिः पादैरध्यायार्थाः क्रमात्स्मृताः ।

इस प्रकार (श्लोकोंके) अठारह पादोंमें क्रमशः अठारह अध्यायोंका तात्पर्य बतलाया गया।

स्वपरप्रतिबन्धोनं स्फीतं राज्यं जहौ नृपः ।
इति वैराग्यदार्ढ्योक्त्यै प्रोक्ता द्रोणिजयादयः ॥१५॥

**अपने-परायोंकी बाधासे रहित निर्विघ्न राज्य राजा परीक्षितने त्यागा था। इस प्रकार उनके वैराग्यकी दृढ़ता प्रकट करनेके लिए अश्वत्थामाका पराभव एवं (पाण्डवोंका महाप्रयाण) वर्णन किया गया है।

प्रथम स्कन्ध समाप्त

---

*श्रीमद्भागवतकी वर्तमान प्रतियोंमें यहींसे दी हुई संख्याओंके साथ अध्याय-संख्याका अन्तर पड़ता है। वर्तमान प्रतियोंमें बारहवें अध्यायमें परीक्षितका जन्म है। श्रीबोपदेवजीने अध्याय १० (श्रीकृष्णका द्वारिका जाना) और अध्याय ११ (द्वारिकामें श्रीकृष्णका राजोचित सम्मान) को अलग-अलग न मानकर एक ही अध्याय (१० वाँ) माना लगता है। अतः संख्या तो मैंने हेमाद्रिके अनुसार ही दी है; किन्तु यहाँसे अध्यायोंकी एक संख्या आगेको मानते जायें तो स्कन्धांत तक वर्तमान प्रतियोंकी संख्यासे मेल बैठ जायगा।

**अपने—अर्थात् पाण्डवोंसे तात्पर्य है। यदि वे रहते तो उनकी उपस्थितिमें परीक्षित राजा हो नहीं सकते थे। उनके महाप्रस्थानके पश्चात् राज्यके एकमात्र अधिकारी परीक्षित् ही शेष रहे। पराये—अर्थात् शत्रुओंमें केवल अश्वत्थामा रह गया था जो पराभव पाकर, शस्त्र त्यागकर अज्ञात स्थानको जा चुका था। अतः राज्यमें बाधा देनेवाला परीक्षितका कोई अपना अथवा पराया शेष नहीं रह गया था।

द्वितीय स्कन्ध

द्वितीये श्रवणाङ्गानि ध्यानं श्रद्धा विमर्शनम् ।
द्वि-द्वि-षड्भिर्दशाध्याये ध्यानं साधारणे हरेः ॥ १ ॥

द्वितीय स्कन्धमें श्रवणके अङ्ग—ध्यान, श्रद्धा और विमर्शन (मनन)-का वर्णन है। दो, दो और छः—इस प्रकार (तीन प्रकरणोंसे युक्त) दस अध्याय (इस स्कन्धमें) हैं। इनमें ध्यान श्रीहरिके साधारण रूपका है।

देहेऽसाधारणे जीवैः श्रद्धा श्रोतरि वक्तरि।
उत्पत्तौ चोपपत्तौ च विमर्शस्तत्र देहयोः ॥ २ ॥

(पहिले दो अध्यायोंमें ध्यानका वर्णन है) उसमें भी शरीरमें जो असाधारण (अन्तर्यामी) चैतन्य है, उसका और जीवका ध्यान है। (दूसरे दो अध्यायों अर्थात् तृतीय-चतुर्थमें) श्रोता (शौनककी) तथा वक्ता (शुकदेवजी) की श्रद्धाका वर्णन है। उत्पत्ति और उपपत्ति दोंनोंमें देहका विमर्श (विचार) है।

उत्पत्तिस्त्रिविधाऽऽद्यस्य मूर्तामूर्तान्यभेदतः।
उपपत्तिस्त्रिधाक्षेपसमाधानप्रयोजनैः ॥ ३ ॥

(अन्तिम छः अध्यायोंमें पहिले तीनमें उत्पत्तिका विमर्श है।) उत्पत्ति (सृष्टि) तीन प्रकारकी है—देहके मूर्त्त-अमूर्त्त तथा इन दोनोंसे भिन्न (अन्य) इस भेदसे तथा (अन्तिम तीन अध्यायोंमें उपपत्तिका विमर्श है।) उपपत्ति भी आक्षेप, समाधान और प्रयोजन—ऐसे तीन भेदोंवाली है (इसमें भी अष्टममें देहोत्पत्तिमें राजाका आक्षेप; नवममें उसका समाधान और दशममें देहोत्पत्तिके प्रयोजनका निरूपण है।)

त्रयाणां दशभिर्भेदैरित्यध्याया दश क्रमात्।

(ध्यान, श्रद्धा और विमर्श) तीनोंके दस भेद होनेसे (ध्यानके दो, श्रद्धाके दो और विमर्शके छः)—इन भेदोंके अनुसार इस स्कन्धमें क्रमशः दस अध्याय हैं।

॥ द्वितीय स्कन्ध समाप्त ॥

तृतीय-स्कन्ध

तृतीये तु त्रयस्त्रिंशदध्यायैस्सर्गवर्णनम् ।
सर्गः कारणसम्भूतिर्भिन्ना सा योगसांख्ययोः ॥ १ ॥

तृतीय स्कन्धमें तैंतीस अध्यायोंमें सर्ग(सृष्टिके मूल तत्त्वोंकी उत्पत्ति)का वर्णन है । सृष्टिके कारण(महत्तत्त्वादि)की उत्पत्तिको सर्ग कहते हैं। (भागवतमें चर्चित) यह सृष्टि-प्रक्रिया योग और सांख्य-(की प्रक्रियाओं)से भिन्न है।

विदुरायोक्तवान् योगो मैत्रेयो देवहूतये ।
कपिलः सांख्यमित्येतावितिहासाविहोदितौ ॥ २ ॥

महर्षि मैत्रेयने विदुरसे योग द्वारा सर्ग-प्रक्रिया और भगवान् कपिलने अपनी माता देवहूतिको सांख्यकी सर्ग-प्रक्रिया बतलायी । प्रक्रियाओंका यह इतिहास इस स्कन्धमें कहा गया है।

ऊनविंशतिराद्योऽत्र चतुर्भिर्विदुरागमः ।
अष्टभिः सर्गविस्तारः सप्तभिः क्रीडता हरेः ॥ ३ ॥

पहिले (विदुर) प्रसङ्गके उन्नीस अध्याय हैं। इनमें-से चार अध्यायोंमें विदुरके आने(मैत्रेयजीसे मिलने तक)का प्रसङ्ग है। आठ अध्यायोंमें सर्ग (मूल सृष्टिका) विस्तार है । सात अध्यायोंमें श्रीहरिके वाराहावतारकी कथा है।

सर्गाधार धरोद्धर्तुः द्वितीयस्तु चतुर्दशे ।
एकेन तत्र संक्षिप्तः सर्गः तद्विस्तरोक्तये ॥ ४ ॥
चतुर्भिः कपिलोत्पत्तिः नवभिः कपिलोक्तयः ।

सर्गके आधार-रूपमें धराका उद्धार करनेवाले भगवान् वाराहका चरित है। दूसरा (कपिल-देवहूति प्रकरण) चौदह अध्यायोंमें है। इसमें एक अध्यायमें सर्गका संक्षिप्त वर्णन* विस्तारसे वर्णनके लिए है। चार अध्यायोंमें भगवान् कपिलके अवतारका वर्णन है। नौ अध्यायोंमें कपिलका उपदेश है।

---

*भगवान् व्यास की वर्णन-पद्धति ही है कि पहिले समास (संक्षित वर्णन) करके फिर उसका व्यास (विस्तार) करते हैं।

प्रकरणोंका वर्णन करके अब अध्यायोंका विषय देते हैं—

बन्धुभिः क्षत्तुरुद्वासः तद्धतेः श्रुतिरुद्धवात् ॥ ५ ॥
कृष्णावतारावसतेः मैत्रेयात्स्वहितस्य च ।
सत्त्रयोविंशतेः जन्म सद्भिर्व्यक्तिः परात्मनः ॥ ६ ॥

(१)बन्धु (दुर्योधन) द्वारा विदुरका निर्वासन, (२) उन बन्धुओं-(कौरवों)के विनाशका समाचार उद्धवसे सुनना, (३) श्रीकृष्णावतारका उपसंहार श्रवण करना, (४) मैत्रेयके द्वारा अपना हित होगा (तत्त्वज्ञान-प्राप्ति) यह सुनना, (५) सत्से तेईस तत्त्वोंकी उत्पत्ति, (६) उन सत्से उत्पन्न तत्त्वोंसे परमात्माकी अभिव्यक्ति,

सम्यग्बुद्ध्वा पुनः प्रश्नः सद्व्यक्तात् पद्मजोद्भवः ।
पद्मजेन स्तुतिस्तस्य सर्गाः कालोक्तये दशः ॥ ७ ॥

(७) भली प्रकार समझकर विदुरका फिर प्रश्न करना, (८) सत्स्वरूप भगवान् नारायणसे ब्रह्माकी उत्पत्ति, (९) ब्रह्माके द्वारा उन भगवान्की स्तुति, (१०) काल-निरूपणके लिए महदादि दस तत्त्वोंका वर्णन,

कालांशाः परमाण्वाद्याः ब्रह्मपुत्रसमुद्भवः ।
आविर्भावो वराहस्य गर्भाधानञ्च दैत्ययोः ॥ ८ ॥

(११) कालके अंश परमाणु आदिका वर्णन, (१२) ब्रह्माके सनकादि पुत्रोंकी उत्पत्ति, (१३) वाराह भगवान्का प्राकट्य, (१४) दैत्य हिरण्यकशिपु-हिरण्याक्षका गर्भमें आना,

शापो मुनिभ्यो वैकुण्ठे विष्णूक्तेभ्यस्त्वनुग्रहः ।
हिरण्याक्षस्य सामर्थ्यं वराहेण च सङ्गरः ॥ ९ ॥

(१५) मुनि सनकादिके द्वारा (जय-विजयको) वैकुण्ठमें शाप, (१६) भगवान् विष्णुकी वाणीसे उनपर अनुग्रह, (१७) हिरण्याक्षका सामर्थ्य, (१८) वाराह भगवान्से उसका युद्ध,

---

कोष्ठान्तर्गत संख्या अध्यायोंकी सूचक है।

वधश्च देवस्तोत्रेषु कारणोक्तिः समासतः ।
कर्दमेन हरेस्तोषो देवहूतेः करग्रहः ॥१०॥

(१९) देवताओंकी स्तुतिसे उस (हिरण्याक्ष) का वध, (२०) संक्षिप्त रूपसे (महत्तत्वादि) कारणोंका वर्णन, (२१) महर्षि कर्दमके द्वारा श्रीहरिको सन्तुष्ट करना, (२२) कर्दमजी द्वारा देवहूतिका पाणि-ग्रहण,

तयोर्विचित्र सम्भोगः ताभ्यां कपिलजन्म च ।
लक्षणं भगवद्भक्तेः सच्चतुर्विंशतेः तथा ॥११॥

(२३) उन कर्दम-देवहूतिका ऐश्वर्यमय विचित्र विहार, (२४) उन दम्पतिसे भगवान कपिलका जन्म, (२५) भगवद्भक्तिका लक्षण, (२६) चौबीस तत्वोंका निरूपण,

असत्पुरुषयोश्चैवं ज्ञानयोगस्य च क्रमः ।
भक्तियोगस्य कालारेः पापात् नामस्यधोगतिः ॥१२॥

(२७) असत् प्रकृति और पुरुषका वर्णन, (२८) जिस क्रमसे ज्ञानयोग प्राप्त हो उस क्रमका वर्णन, (२९) भक्ति-योगका और कालके भी शासक भगवान्का वर्णन, (३०) तमोगुणके द्वारा अधोगतिकी प्राप्ति,

राजस्यान्तःपुण्यपापात् सात्विकच्यूद्र्ध्वंच पुण्यतः ।
देवहूतिवदात्माप्तिः अध्यायार्था इमेऽङ्घ्रिभिः ॥१३॥

(३१) रजोगुणके द्वारा पुण्य-पाप-मिश्रित कर्मसे मध्यम गति, (३२) सात्त्विककी पुण्यसे ऊर्ध्व गति, (३३) देवहूतिके समान (सांख्य-योगके आश्रयसे) आत्म-प्राप्ति,—इस प्रकार ये तैंतीस अध्याय कहे गये।

॥ तृतीव स्कन्ध समाप्त ॥

चतुर्थ स्कन्ध

एकोनत्रिंशत्यध्यायैर्विसर्गस्तुर्य ईरितः ।
विसर्गः कार्यसम्भूतिः कार्यबुध्वा चतुर्विधम् ॥ १ ॥

*उन्तीस अध्यायोंमें इस चतुर्थ स्कन्धमें विसर्गका वर्णन है। कार्य-जगत्की उत्पत्तिका नाम विसर्ग है। इस कार्यको चार प्रकारका समझना चाहिये।

स्त्रीबालप्रौढवृद्धत्वैः चतुः प्रकरणीकृता ।
सतीध्रुवपृथुप्राचीनेतिहासैः तदुक्तये ॥ २ ॥
सप्तभिश्च चतुर्भिश्च दशभिः चाष्टभिस्तथा ।

स्त्री, बालक, प्रौढ़ और वृद्ध (संसारमें ये होंगे) इस दृष्टिसे (विसर्गके वर्णनमें) चार प्रकरण किये हैं। इनमें (स्त्री) सती, (बालक) ध्रुव, (प्रौढ़) पृथु और (वृद्ध) प्राचीनबर्हिके इतिहासको कहा गया है। (इन प्रकरणोंमें) सात अध्याय सती-चरितके, चार ध्रुवके, दस पृथुके और आठ प्राचीनबर्हिके हैं।

यहाँ तक प्रकरणोंका वर्णन हुआ।

मनु कन्यान्वयः सत्यैः द्वेषः तत्पतितातयोः ॥ ३ ॥
पत्या निषेधनं सत्याः देहत्यागः पितुर्मखे ।
गणैर्दक्षमखध्वंसः ब्रह्मणा रुद्रसान्त्वनम् ॥ ४ ॥

(१) सतीका वर्णन करनेके लिए दक्ष-कन्याओंका वर्णन, (२) सतीके पिता दक्ष और पति भगवान् शिवका द्वेष, (३) पतिद्वारा सतीको (पितृगृह जानेसे) निषेध, (४) पिताके यज्ञमें सतीका देह-त्याग, (५) शिवगणों द्वारा दक्ष-यज्ञ-विध्वंस, (६) ब्रह्माके द्वारा रुद्रको सान्त्वना देना,

---

*यहाँ चतुर्थस्कन्धकी अध्याय संख्या २९कही है; आगे तीसरे श्लोक में प्रकरणोंकी श्लोक संख्या दी है, उनका योग भी २९ ही है, किन्तु अध्यायोंके विषय-वर्णनमें ३१ अध्यायोंके विषयोंका वर्णन है। इस प्रकार बोपदेवजीको इस स्कन्धमें ३१ अध्याय मान्य हैं। केवल विसर्गके वर्णनके २९ अध्याय हैं, शेष दोमें प्रचेताओंका वर्णन है।

विष्णुना यज्ञसंसिद्धिः ध्रुवेणाराधनं हरेः ।
कामलाभो ध्रुवस्याऽस्मात् यक्षान्तात् वारणं मनोः ॥ ५ ॥

(७) भगवान विष्णुके द्वारा दक्ष-यज्ञकी संसिद्धि, (८) ध्रुवके, द्वारा श्रीहरिकी आराधना, (९) श्रीहरिसे ध्रुवकी अभीष्ट-प्राप्ति (१०-११) मनुके द्वारा ध्रुवको यक्ष-विनाशसे रोकना,

विष्णुध्रुवपद प्राप्तिः पृथवे वेनसम्भवः ।
वेनवाहोः पृथूत्पत्तिः सूताद्यैः स्तवनं पृथोः ॥ ६ ॥

(१२) श्रीविष्णु द्वारा प्रदत्त ध्रुवको पद-प्राप्ति, (१३) पृथु-चरितके प्रसङ्गमें वेनकी उत्पत्ति, (१४-१५)वेनकी भुजाके मन्थनसे पृथुकी उत्पत्ति, (१६) सूतादि द्वारा पृथुकी स्तुति,

पृथुना निग्रहो भूमेः तत्तद्दुग्धस्य दोहनम् ।
जयोऽश्वमेधे शक्रस्य साक्षात्कारो मधुद्विषः ॥ ७ ॥

(१७) पृथुके द्वारा भूमि-निग्रह, (१८) भूमिका दोहन, (१९) अश्व-मेध यज्ञमें इन्द्रको जीतना, (२०) श्रीमधुसूदन भगवान्का दर्शन,

सभामध्ये स्वधर्मोक्तिः कुमारेभ्यः परात्मधीः ।
तया वने स्वधर्माप्तिः तपः पित्रे प्रचेतसाम् ॥ ८ ॥

(२१) सभा (प्रजाजनों) के बीचमें पृथुका अपने राज-धर्मका वर्णन, (२२) सनकादिकुमारों द्वारा उनको परमात्मज्ञानकी प्राप्ति, (२३) वनमें जाकर स्वधर्मरूप मोक्षकी प्राप्ति, (२४) पिताके आदेशसे प्रचेताओंका तप करने जाना,

ऽध्यात्मोक्तिर्नारदेनास्य पापर्द्धिः तां विनात्मनः ।
कालाभिभूतिः तच्छक्तेः मुक्तिर्द्वन्द्वविपर्यये ॥ ९ ॥

(२५) प्राचीनबर्हिको देवर्षि नारदका अध्यात्मोपदेश, (२६) उस बुद्धि-रूपा पुरंजनीके बिना पाप-प्रवृत्ति होकर आखेटमें लगना, (२७) उस पुरंजनकी शक्तिका कालसे अभिभूत होना, (२८) इस द्वन्द्वसे विपर्यय होकर जन्मान्तरमें पुरंजनकी मुक्ति,

पुरञ्जनादिव्याख्यानं तपस्सिद्धिः प्रचेतसाम् ।
दक्षमुत्पाद्य निर्वाणं अध्यायार्थस्पृशोऽङ्घ्रयः ॥१०॥

(२९) पुरञ्जनके दिव्य आख्यानका स्पष्टीकरण, (३०) प्रचेताओं-की तपःसिद्धि, (३१) दक्षको उत्पन्न करके प्रचेताओंका निर्वाण,—इस प्रकार चरण-स्पर्शके समान अध्यायार्थका केवल स्पर्श किया गया।

उपक्रमोपसंहारौ प्रचेतोभिस्तदात्मजैः ।
तथाप्यध्यात्मपारोक्ष्याच्छ्रैष्ठ्यं प्राचीनबर्हिषः ॥११॥

यद्यपि इस प्रकरणका उपक्रम (आरम्भ) और उपसंहार (समाप्ति) राजा प्राचीनबर्हिके पुत्र प्रचेताओंसे ही हुआ है, फिर भी परोक्षाख्यानसे अध्यात्म-निरूपणके द्वारा राजा प्राचीनबर्हिकी ही श्रेष्ठता प्रतिपादित हुई है।

पुण्यं पुत्रस्य पितुरप्यन्तःकरणशुद्धये ।
भवेदिति द्योतयितुं प्रचेतोवृत्त वर्णनम् ॥१२॥

(केवल पिताका पुण्य ही पुत्रके अन्तःकरणकी शुद्धिका कारण संस्कार-परम्परासे नहीं होता) पुत्रका पुण्य भी पिताके अन्तःकरणकी शुद्धिका कारण होता है। यह बतलानेके लिए प्रचेताओंका यह वर्णन है।

(इस प्रकार प्रचेताओंके वर्णनके ये अन्तिम दो अध्याय विसर्गसे भिन्न प्रकरण है—एक प्रकारसे यह अवान्तर प्रकरण है—यह बतलाया गया है।)

॥ चतुर्थ स्कन्ध समाप्त ॥

पञ्चम स्कन्ध

पञ्चमे स्थानमध्यायैः षड्विंशत्या निरूपितम् ।
मर्यादापालनं स्थानं तास्तिस्रो लोकभेदतः ॥ १ ॥

पञ्चम स्कन्धमें छब्बीस अध्यायोंमें स्थानका निरूपण है। मर्यादा-पालनका नाम स्थान है। तीन लोकोंके भेदसे वह तीन है।

लोकाः क्षितिद्यौः पातालं प्रियव्रत तदुद्भवैः ।
क्षितेर्द्वीपादि मर्यादाः कृताः प्राक्तत्तदन्वयः ॥ २ ॥

लोक तीन हैं—पृथ्वी, आकाश और पाताल। प्रियव्रत और उनके पुत्र-पौत्रोंने पृथ्वीमें द्वीपादिका विभाजन करके सीमा बनायी।

एकं च पञ्चदशभिः पञ्चभिश्च त्रिभिस्त्रिभिः ।
चतुः प्रकरणा प्रोक्ता अध्यायार्थान् क्रमशः शृणु ॥ ३ ॥

एक प्रकरण पन्द्रह अध्यायोंमें, फिर पाँच अध्यायों एवं तीन-तीन अध्यायोंके दो प्रकरण, इस प्रकार चार प्रकरण कहे गये। अब क्रमशः अध्यायोंका अर्थ (विषय) सुनो।

प्रियव्रताग्नीध्रनाभीष्वेकैकमृषभे त्रयः ।
राजोपदेष्दृमुक्तत्वैः भरतेऽष्टौ प्रपौत्रजे ॥ ४ ॥

प्रियव्रत, अग्नीध्र, नाभि—इनके वर्णनके एक-एक अध्याय हैं। ऋषभदेवजीका वर्णन तीन अध्यायोंमें हैं। उनमें-से एकमें उनका राज्यत्व, दूसरेमें उपदेश और तीसरेमें मुक्तत्वका वर्णन है। प्रियव्रतके प्रपौत्र भरतका वर्णन आठ अध्यायोंमें है।

पुण्यैणसङ्ग जड़ता शिविकोढि प्रकाशनैः ।
तत्वाख्यान भवारण्य तद्व्याख्यानैः परोऽन्वये ॥ ५ ॥

राजा भरतका पुण्य, हरिणमें आसक्तिसे हरिण होना, जड़ता—पागलकी भाँति रहना, पालकी ढोना, अपनेको प्रकट करना, तत्त्वज्ञान-का उपदेश, भवाटवी-वर्णन और उसकी व्याख्या—इस प्रकार भरताख्यानके आठ अध्याय हैं। एक अध्यायमें भरतके वंशका वर्णन है।

मेर्विलावृत षट्कद्वि वर्ष - द्वीपैश्च पञ्चकौ ।
दिवि क्रमात् त्रयः सूर्यध्रुवसूर्यान्तरध्रुवैः ।।
पाताल - शेष - नरकैस्त्रयोऽधो भुवने मताः ।। ६ ।।

मेरु, इलावृत आदिके छः-छः के दो, वर्ष और द्वीपोंके वर्णनके पाँच अध्याय हैं। आकाश वर्णनके तीन अध्याय हैं—क्रमशः सूर्य, ध्रुव तथा सूर्यके मध्य एवं ध्रुवका उनमें वर्णन है। पाताल, शेष तथा नरकोंके वर्णन, ये अधोलोकोंके वर्णनके तीन अध्याय हैं।

।। पञ्चम स्कन्ध समाप्त ।।

षष्ठ स्कन्ध

षष्ठ एकोनविंशत्या पुष्टिः साऽनुग्रहो हरेः ।। १ ।।

षष्ठ स्कन्धमें उन्नीस अध्यायोंमें पुष्टिका वर्णन है। श्रीहरिके अनुग्रहको ही पुष्टि कहते हैं।

कर्मणा येन यैर्यत्र स्थातव्यं तत्र तेन ते ।
तिष्ठन्तीति हि मर्यादा पालनं स्थानमीरितम् ।। २ ।।

जिस कर्म-संस्कारके द्वारा जिसको जब जहाँ रहना है, वह तब वहाँ रहता है, इस मर्यादा-पालनके कारण उन-उन स्थानों, लोकोंको स्थान कहा गया है।

कृतेऽपि पातके यत्र न पातः प्रत्युतोन्नतिः ।
सोऽनुग्रहः अजामिलस्य भुवीन्द्रस्य यथा दिवि ।। ३ ।।

(मर्यादानुसार उन-उन लोकोंमें रहते हुए) पाप करनेपर भी जब पापके फलसे पतन नहीं होता, उलटे उन्नति होती है, यह श्रीहरिका अनुग्रह ही है। जैसे पृथ्वीपर अजामिल तथा स्वर्गमें इन्द्रको नहीं हुआ।

त्रिभिः षोडशभिश्चैन्द्रं पापं षष्टाष्टकद्विके ।
विश्वरूपस्य वृत्रस्य मरुतां च वधात्त्रिधा ॥ ४ ॥

(महाप्रकरण दो ही हैं) तीन अध्यायोंमें और सोलह अध्यायोंमें । इनमें-से इन्द्रके पापका वर्णन छः अध्याय , आठ अध्याय और दो अध्यायों-में है । यह विश्वरूप-वध , पुत्र-वध और मरुतोंके वध-प्रयत्न रूपसे तीन रूपोंमें है ।

दक्षान्वयस्तदुत्पत्त्यै वैश्वरूपे त्रिकेऽग्रिमे ।
वृत्राष्टके चतुष्केऽन्त्ये वृत्रप्राक्चित्रकेतुता ॥ ५ ॥

विश्वरूप प्रकरणके प्रथम तीन अध्यायोंमें दक्षके वंशका वर्णन विश्वरूपकी उत्पत्तिका वर्णन करनेके लिए है । ऐसे ही वृत्त-वर्णनके आठ अध्यायोंके अन्तिम चार अध्यायोंमें चित्रकेतुका वर्णन है ; क्योंकि वृत्र ही पूर्वजन्ममें चित्रकेतु था ।

यहाँ तक प्रकरणार्थ पूरा हुआ ।

अजामिलाघनाशोक्तिः वैष्णवैर्याम्यनिग्रहः ।
यमेन सान्त्वनं तेषां दक्षेणाराधनं हरेः ॥ ६ ॥

(१) पाप करनेसे अजामिलके पतनका वर्णन, (२) विष्णु-दूतों द्वारा यमदूतोंको रोकना, (३) यमराज द्वारा अपने दूतोंको सान्त्वना देना, (४) दक्षके द्वारा श्रीहरिकी आराधना,

नारदात्पुत्रनाशोऽस्य दौहित्राद्विश्वरूपभूः ।
तस्य देवपुरोधस्त्वं गुरुत्वं विष्णुवर्मणि ॥ ७ ॥

(५) देवर्षि नारद द्वारा दक्ष-पुत्रोंको संन्यासी बना देना, (६) दक्ष-की पुत्रीसे विश्वरूपकी उत्पत्ति, (७) विश्वरूपका देवताओंका पौरोहित्य स्वीकार, (८) नारायण कवच देकर विश्वरूपका इन्द्रका गुरु बनना ,

तद् वधाघाद् वृत्रभयं वृत्रवासवसंगरः ।
वृत्रभक्तिज्ञानशौर्यं वृत्रस्य मरणं रणे ॥ ८ ॥

(९) विश्वरूपको मारनेसे इन्द्रको वृत्र द्वारा भय, (१०) वृत्र और इन्द्रका युद्ध (११) वृत्रकी भक्ति, ज्ञान, शौर्य, (१२) युद्धमें वृत्रकी मृत्यु,

वृत्रहत्या प्रतीकारः चित्रकेतोः सुताच्छुचः ।
बोधोऽङ्गिरानारदाभ्यां विद्यालाभश्च नारदात् ॥ ९ ॥

(१३) इन्द्र द्वारा वृत्र-हत्याका प्रतिकार, (१४) चित्रकेतुको पुत्रशोक, (१५) महर्षि अङ्गिरा और देवर्षि नारद द्वारा उपदेश, (१६) नारदजी द्वारा चित्रकेतुको ज्ञान-प्राप्ति,

गौरीशापाच्च वृत्रत्वं गर्भे शक्रमरुद्भिदा ।
व्रतं दितिकृतं पुत्र्यं प्रत्यध्यायमिमेऽङ्घ्रयः ॥१०॥

(१७) भगवती पार्वतीके शापसे चित्रकेतुका वृत्र होना, (१८) इन्द्र द्वारा दितिके गर्भको काटना, (१९) दितिके द्वारा पुत्रार्थ किया गया व्रत,— ये अध्यायोंके चरण-तात्पर्य हैं ।

॥ षष्ठ स्कन्ध समाप्त ॥

सप्तम स्कन्ध

सप्तमे पञ्चदशभिरध्यायैरूति वर्णनम् ।
ऊतिः प्राक्कर्मजा कर्ता भोक्तास्मीत्यादि वासना ॥ १॥

सप्तम स्कन्धमें पन्द्रह अध्यायोंमें ऊतिका वर्णन है। पूर्वजन्मके कर्मोंसे मैं कर्त्ता और (उनके फलका) भोक्ता हूँ, आदि कर्म-वासनाका नाम ऊति है।

सा प्राह्लादेतिहासेन दशाध्यायेन दर्शिता ।
स्वरूपतः कारणतः पञ्चाध्यायेन कर्मणा ॥ २ ॥

वह कर्म-वासना स्वरूपतः प्रह्लादके इतिहास द्वारा दस अध्यायोंमें दिखायी है और उसके कारणभूत कर्मों (वर्णाश्रम-धर्म) का वर्णन पाँच अध्यायोंमें है।

प्रह्लादस्य परो रागो द्वेषः पितृपितृव्ययोः ।
विष्णौ तयोरविषये कर्मणोऽसुर भावदात् ॥ ३ ॥

प्रत्यक्ष मिलन न होनेपर भी प्रह्लादका भगवान् विष्णुमें परम प्रेम और उनके पिता हिरण्यकशिपु तथा चाचा हिरण्याक्षका विष्णुसे द्वेष पूर्वकृत असुर भाव देनेवाले कर्मसे ही हुआ।

द्रष्टुमीशं विहन्तुं तद्वैकुण्ठकलहान्मिथः ।
चतुस्सनो हि प्रह्लाद इतरौ विजयो जयः ॥ ४ ॥

भगवान् विष्णुके दर्शनके लिए जाने और उसमें बाधा देनेके कारण वकुण्ठमें परस्पर कलह करके सनकादि चारों कुमार (एक ही रूपमें) प्रह्लाद हुए और विजय तथा जय (विष्णुपार्षद) हिरण्यकशिपु-हिरण्याक्ष हुए।

प्राङ्निष्कामसकामाभ्यां भक्तिभ्यां वासनाद्वयम् ।
द्वयोरप्येक फलता कर्मणो भोगतः क्षयात् ॥ ५ ॥

पहिले (प्रह्लादने) निष्काम और (उनके पिता-चाचाने) सकाम भक्ति की। दोनों ही वासनाएँ हैं ; किंतु कर्मका भोगके द्वारा क्षय होनेपर

सकाम-निष्काम दोनों भक्तिका एक ही फल (भगवत्प्राप्ति) कही गयी ।

यहाँ तक स्कन्धार्थ—प्रकरणार्थ हुआ ।

कुमारैर्द्वाःस्थयोः शापः हिरण्यकशिपोः शुचः ।
ब्रह्मणो वरलाभश्च प्रह्लादस्य च सम्भवः ।। ६ ।।

(१) सनत्कुमार द्वारा विष्णु भगवान्के द्वारपाल जय-विजयको शाप, (२) हिरण्यकशिपुका अपने भाई हिरण्याक्षकी मृत्युका शोक, (३) तप करके ब्रह्मासे हिरण्यकशिपुका वरदान प्राप्त करना, (४) प्रह्लादका जन्म ।

पित्रा परीक्षणं तस्य बालानां तेन शिक्षणम् ।
नारदोक्तानुवादश्च हिरण्यकशिपोर्वधः ।। ७ ।।

(५) पिताके द्वारा प्रह्लादकी परीक्षा, (६) समीपके बालकोंको प्रह्लाद द्वारा शिक्षण, (७) प्रह्लादका नारदजीसे सुना उपदेश सुनाना, (८) भगवान् नृसिंह द्वारा हिरण्यकशिपुका वध,

प्रह्लादेन नृसिंहेला ततोऽस्य शिववद्यशः ।
सामान्येन सदाचारः तथा त्रिष्वाश्रमेषु च ।। ८ ।।

(९) प्रह्लाद द्वारा नृसिंहकी स्तुति, (१०) प्रह्लादका कल्याणकारी सुयश, (११) सामान्य सदाचार, (१२) तीनों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ) आश्रमोंका धर्म ।

परिव्राजक धर्माश्च मोक्षधर्मा गृहाश्रमे ।
श्राद्धादीनि मुमूक्षूणां यावदध्यायमङ्घ्रयः ।। ९।।

(१३) परिव्राजकके धर्म, (१४) गृहस्थाश्रममें रहते होनेवाले मोक्ष-धर्म, (१५) मुमुक्षुओंके (अन्तःकरणकी शुद्धिके लिए) श्राद्धादिका वर्णन,—यह अध्यायोंका संक्षिप्त परिचय है ।

।। सप्तम स्कन्धसमाप्त ।।

अष्टम स्कन्ध

मन्वन्तरार्थमध्यायास्त्रयोविंशतिरष्टमे ।
मन्वन्तराणि प्रत्येकं ब्रह्माहेषु चतुर्दश ॥ १ ॥

मन्वन्तरोंका वर्णन करनेके लिए अष्टम स्कन्धमें तेईस* अध्याय है। प्रत्येक कल्प (ब्रह्माके दिन) में चौदह ही मन्वन्तर होते हैं।

चत्वार्याद्येऽत्र तुर्यस्थं त्रिषु नागेन्द्रमोक्षणम् ।
द्वे पञ्चमेऽत्र षष्ठस्थं सप्तस्वमृतमन्थनम् ॥ २ ॥

प्रथम चार अध्यायोमें चतुर्थ मन्वन्तरमें उत्पन्न गजेन्द्र-मोक्षका वर्णन तीन अध्यायोंमें है (प्रथम अध्याय प्रस्तावना रुप है)। पञ्चम अध्यायमें दो मन्वन्तर रैवत और चाक्षुषका वर्णन है। छठे मन्वन्तरमें अवतरित (कच्छप) भगवान्के द्वारा अमृत-मन्थनका वर्णन सात अध्यायोंमें है।

त्रयोदशेऽष्टौ नवसु सप्तमे बलिबन्धनम् ।
त्रयोविंशे मत्स्यकथा षष्ठसप्तमसन्धिगा ॥ ३ ॥

तेरहवें अध्यायमें आठ मनुओंका वर्णन है। सप्तम वैवस्वत मन्वन्तरमें उत्पन्न दैत्यराज बलिके बन्धनकी कथा नौ अध्यायोंमें है। तेईसवें अध्यायमें छठे चाक्षुष और सातवें वैवस्वत मन्वन्तरकी सन्धिमें उत्पन्न मत्स्यावतारकी कथा है।

मन्वन्तरं सतां धर्मो मनुभिर्यत्प्रकाश्यते ।
स्मरणाचरणाख्यानैः स्वे स्वे सर्षिभिरन्तरे ॥ ४ ॥

मन्वन्तरका अर्थ है सज्जनोंका धर्म, जिसे उस मन्वन्तरके मनुके द्वारा प्रकट किया जाता है। उन-उन मन्वन्तरोंके सप्तर्षि उस धर्मका स्मरणकर (स्मृतियाँ बनाते) हैं, उसका आचरण तथा प्रवचन भी करते हैं।

---

*बोपदेवजी अष्टम स्कन्धमें तेईस अध्याय ही मानते हैं। चौदहवें अध्यायको ये तेरहवेंका ही अंश मानते प्रतीत होते हैं। उसे एक स्वतन्त्र अध्याय नहीं मानते। अतः आगेके इनके वर्णनोंमें एक अध्याय संख्या कम होती गयी है।

विपद्यात्मानमीशाने समर्द्यर्थिषु चार्पयेत् ।
उभयत्र प्रतिज्ञातं निर्वहेदिति स त्रिधा ॥ ५ ॥

यह सद्धर्म तीन प्रकारका है—विपत्तिमें अपनेको भगवान्‌पर छोड़ देना—भगवत्-शरणागति, सम्पत्ति होनेपर उसे माँगनेवालेको देना और यदि सम्पत्ति-विपत्ति दोनों साथ उपस्थित हों तो अपनी प्रतिज्ञाका निर्वाह करे।

गजेन्द्रमोक्षणेऽम्भोधिमन्थने बलिबन्धने ।
स व्यक्तः तं झषो वेत्ति तत्त्वतः तेन ताः कथाः ॥ ६ ॥

सद्धर्मका यह त्रिविध रूप गजेन्द्र-मोक्षमें, समुद्र-मन्थनमें और बलि-बन्धनमें प्रकट हुआ है। भगवान् मत्स्य ही तत्त्वतः उस धर्मको जानते हैं, इससे उनके अवतारकी कथा अन्तमें है।

ग्राहाद्बन्धो हरेर्मोक्षः प्राग्जन्मेति त्रिको गजे ।
मन्दरासो विषग्रासो हरेः स्त्रीत्वं सुरे सुधा ॥ ७ ॥

१ गजेन्द्रका ग्राहके द्वारा बन्धन, २ पूर्वजन्मकी स्मृतिसे स्तुति और भगवान् द्वारा गजेन्द्रका मोक्ष, ३ गजेन्द्रके पूर्वजन्मका वर्णन, ये तीन अध्याय गजेन्द्र-मोक्षके हैं। १ मन्दराचलका निक्षेप, २ भगवान शिवका हलाहल विषपान, ३ श्रीहरिका स्त्री-रूप धारण करना, ४ देवताओंको अमृत पिलाना,

रणः सुरेजयः शम्भोः स्त्रीक्षेत्थं सप्तकोऽर्णवे ।
बलेर्जयो व्रतोऽदित्या हरेर्जन्मार्थिता बलौ ॥ ८ ॥

५ देवासुर-संग्राम, ६ देवताओंकी विजय, ७ शङ्करजीकी मोहिनी रूप देखनेकी इच्छा—ये सात अध्याय समुद्र-मन्थनके हैं। १ बलिकी विजय, २ अदितिका व्रत, ३ भगवान् वामनका जन्म, ४ बलिसे वामनकी याचना,

बलेर्दित्सा हरेर्वृद्धिः निग्रहानुग्रहौ बलेः ।
प्रह्लादसूक्तयश्चैवं अध्यायानवको बलौ ॥ ९ ॥

५ बलिकी दान देनेकी तत्परता, ६ वामन भगवान्‌का बढ़ना, ७ बलिका बन्धन, ८ बलिपर अनुग्रह, ९ प्रह्लादकी सूक्ति—इस प्रकार बलि-बन्धन प्रसङ्गमें नौ अध्याय हैं।*

॥ अष्टम स्कन्ध समाप्त ॥

नवम स्कन्ध

नवमे तु चतुर्विंशत्यध्यायीशाऽनुकीर्तये ।
ईशा भूपतयस्तत्र रामकृष्णादयः स्वयम् ॥ १ ॥

नवम स्कन्धके चौबीस अध्याय ईशानुकथाके वर्णनके हैं। इनमें ईशका अर्थ भूपति है—जिनमें श्रीराम , श्रीकृष्ण स्वयं ईश्वर हैं।

इतरे तन्नियोगेन तत्कथेशानुकीर्तनम् ।
इलः पृषध्रः शर्यातिरम्बरीषोऽजविप्रयोः ॥ २ ॥

उन श्रीराम-कृष्णके सम्बन्धसे दूसरे नरेश भी ईश कहे गये , उन सबकी कथाका वर्णन ईशानुकथा है। इसमें** (१) इल, (२) पृषध्रा, (३) शर्याति, (४) अम्बरीषके प्रसंगमें (५) अजन्मा विष्णु और दुर्वासाकी कथा,

---

*गजेन्द्रमोक्षके तीन, अमृत-मन्थनके सात और बलि-बन्धनके नौ—इस प्रकार तीन प्रकरणोंमें कुल १९ अध्यायोंका विवरण यहाँ है । मत्स्यावतार-प्रकरणकी चर्चा कहीं नहीं है । इतनेपर भी 'प्रथमके चार अध्यायोंमें से तीन अध्याय गजेन्द्र मोक्षके माने हैं (देखिये श्लोक २); अतः केवल चतुर्दश अध्याय रहता है, जिसकी चर्चा नहीं है । अध्याय-संख्या भी बोपदेवजीने इस स्कन्धकी २३ ही मानी हैं ।

**कोष्ठके भीतरकी संख्या अध्यायकी क्रमसंख्याकी सूचक हैं ।

मान्धाता च हरिश्चन्द्रः सगरोऽथ भगीरथः ।
रामे राष्ट्रभ्रंश लब्ध्योः कुशोऽथ मिथिलेश्वरः ॥ ३ ॥

(६) मान्धाता, (७) हरिश्चन्द्र, (८) सगर, (९) भगीरथ, (१०) श्रीराम, (११) श्रीरामकी वनवास-प्राप्ति, राज्यकी हानि, (१२) कुश, (१३) मिथिलाके राजा,

ऐलो रामोऽर्जुनक्षत्रवधयोः क्षत्रवृद्धकः ।
ययातेर्भुक्तिमुक्त्योश्च पुरुस्त्रिषु यदुर्द्वयोः ॥ ४ ॥

(१४) पुरुरवा, (१५) परशुरामके द्वारा सहस्रार्जुन तथा क्षत्रियोंका संहार, (१७) क्षत्र वृद्धक (१८) ययाति (१९) ययातिका भोग-मोक्ष पुरुवंश-वर्णनके तीन और यदुवंश वर्णनके दो अध्याय (ये पाँच मिलकर २४ अध्याय हो गये ।)

दौष्यन्ति-रन्ति-भीष्माणां प्राधान्याद् वृष्णि-कृष्णयोः ।
चतुर्विंशतिरित्येते राजानोऽध्यायनायकाः ॥ ५ ॥

(२०) दुष्यन्त-पुत्र भरत, (२१) रन्तिदेव, (२२) भीष्म, (२३) वृष्णि, (२४) श्रीकृष्णकी प्रधानताके कारण ये चौबीस राजा अध्यायोंके नायक हैं ।

रामौ ययात्यम्बरीषौ चत्वारोऽष्टौ हि कर्मभिः ।
त्रयोदशैकादशभिः क्रमात्तत्रार्क सोमजाः ॥ ६ ॥

श्रीराम, परशुराम, ययाति और अम्बरीष—इन चारोंको इनके कर्मके कारण आठ मानना चाहिये । तेरह प्रमुख इनमें सूर्यवंशके हैं और ग्यारह चन्द्रवंशमें उत्पन्न हुए हैं ।

॥ नवम स्कन्ध समाप्त ॥

दशम स्कन्ध

निरोधो दशमस्कन्धे नवत्यध्याय ईरितः ।
निरोधो नाम सृष्टानां संहारः स चतुर्विधः ॥ १ ॥

दशम स्कन्धमें निरोधका वर्णन है जो नब्बे अध्यायोंमें वर्णित है। जिनकी सृष्टि हुई है, उनके संहारका नाम निरोध है। यह निरोध चार प्रकारका है।

नैमित्तिकः प्राकृतिको ब्रह्मणोऽन्ते दिनायुषोः ।
नित्यः प्रतिक्षणं मुक्तिरात्यन्तिक इति स्मृतः ॥ २॥

एक सहस्र चतुर्युगीका ब्रह्माका दिन बीतनेपर ब्रह्माकी रात्रिके प्रारम्भमें होनेवाली प्रलय नैमित्तिक है। ब्रह्माकी द्विपरार्ध आयु बीतनेपर प्रकृतिमें स्वतः प्रलय होती है (उस समय पञ्चभूतादि सब लय हो जाते हैं, यह प्राकृतिक महाप्रलय है)। प्रतिक्षण जो कण-कण नष्ट हो रहा है, वह नित्य संहार है और मुक्ति आत्यन्तिक प्रलय कही गयी है।

नैमित्तिको निरोधोऽन्यो धर्मग्लानिनिमित्तकः ।
भूमिभारावताराख्यो यदर्थं जन्म मापतेः ॥ ३ ॥

भूभार-हरण-रूप एक अन्य नैमित्तिक संहार (निरोध) भी है—इसमें धर्मका ह्रास निमित्त होता है। इसी भू-भार-हरणके लिए लक्ष्मीपति भगवान्‌का अवतार होता है।

स एष दशमे प्रोक्तो मुक्तिरेकादशे ततः ।
त्रयोऽन्ये द्वादशे शुद्धं निरूपयितुमाश्रयम् ॥ ४ ॥

वह भूभार-हरणरूप निरोध इस दशम स्कन्धमें कहा गया है। आत्यन्तिक निरोध—मुक्तिका वर्णन अगले एकादश स्कन्धमें है। दूसरे तीनों—नैमित्तिक, प्राकृतिक और नित्य निरोध (प्रलयों)—का वर्णन द्वादश स्कन्धमें शुद्ध आश्रय-तत्त्वके निरूपणमें किया गया है।

तस्यावताराः कर्त्तारो हरेस्तेषु महत्तमः ।
कृष्णावतारस्तस्यातश्चरितं दशमे कृतम् ॥ ५ ॥

उन श्रीहरिके कितने ही अवतार हैं। उन अवतारोंमें महत्तम श्रीकृष्णावतार है, अतः इस अवतारके चरित निरोधात्मक दशम स्कन्ध-में वर्णित किये गये हैं।

यहाँ तक स्कन्धार्थ बतलाकर प्रकरण बतलाते हैं।

गोकुले मथुरायां तद् द्वारिकायां कृतं त्रिधा।
चतुश्चत्वारिंशतोक्तं सप्तभिस्तत्परैः क्रमात् ॥ ६ ॥

गोकुल (व्रज), मथुरा तथा द्वारिकामें किये चरितोंके भेदसे तीन भेद चरितोंके हैं। (इनमें-से पूर्वार्द्धके वर्णनके) चौवालीस अध्याय (गोकुल चरितके) और उसके आगेके सात अध्याय (मथुराचरितके) हैं।

प्राकट्य - बाल्य - पौगण्ड - कैशोर - प्रौढि भेदतः।
पञ्चधा गोकुलकृतं तत्र कंसवधादिकम् ॥
चतुर्भिर्दशभिः शक्रैः सप्तभिः नवभिः क्रमात् ॥ ७ ॥

प्राकट्य, बाल्य, पौगण्ड, कैशोर और प्रौढ़ अवस्थाके भेदसे गोकुल चरित पाँच भागोंमें है। यह कंसवधादि पर्यन्त है। इसमें अध्यायोंका विभाजन क्रमशः चार, दस, चौदह, सात और नौ है।

प्रकरण कहकर गोकुल-चरितके अध्यायार्थ देते हैं।

कंसभीर्भाविनः कृष्णात् देवक्यां तस्य सम्भवः।
जातस्य गोकुलप्राप्तिः निद्रोक्ता कंसभीः पुनः ॥ ८ ॥

(१) आगे उत्पन्न होनेवाले कृष्णसे कंसका भय, (२) देवकीसे श्रीकृष्णका जन्म, (३) उत्पन्न होते ही उनका गोकुल चले जाना, (४) योग-निद्राके कहनेसे पुनः कंसका भय,

व्रजे जन्मोत्सवस्तस्य तेनाथो पूतनावधः।
अनस्तृणावर्तभङ्गः तस्य नामानि चापलम् ॥ ९ ॥

(५) व्रज (गोकुल)में श्रीकृष्ण-जन्मोत्सव, (६) श्रीकृष्णके द्वारा पूतनाका वध, (७) शकट-भञ्जन और तृणावर्त-वध, (८) उनका नाम-करण और चपलता,

दामोदरत्वमटनं यमलार्जुनभञ्जनम् ।
वधश्च वत्सवकयोः तथाऽघासुरभोगिनः ॥१०॥

(९) दामोदर बनकर (कमरमें रस्सी बाँधे जाकर) भी ऊखल खींचते चलना, (१०) यमलार्जुनको गिरा देना, (११) वत्सासुर और बका-सुरका-वध, (१२) अजगर बने अघासुरका वध,

वत्सचौर - ब्रह्ममोहः ब्रह्मणा स्तवनं हरेः ।
रामेण धेनुकवधः कालियस्य स्वयं दमः ॥११॥

(१३) बछड़े चुरानेवाले ब्रह्माका मोह, (१४) ब्रह्माके द्वारा श्रीहरि-की स्तुति, (१५) बलरामजीके द्वारा धेनुकासुरका मरवा देना, (१६) स्वयं कालिय-मर्दन करना,

व्रजस्य रक्षणं दावात् प्रालम्बो हलिना वधः ।
दावाद्गोत्राणमैषीके प्रावृट्शरदृतुश्रियौ ॥१२॥

(१७) दावाग्निसे (कालिय ह्रदके पास सोये) व्रजवासियोंकी रक्षा, (१८) बलरामजीके द्वारा प्रलम्बासुरका मारा जाना, (१९) मूंज वनमें दावाग्निसे गायोंकी रक्षा, (२०) वर्षा और शरद ऋतुकी शोभाका वर्णन,

गोप्यानन्दो वेणुरवात् गोपीनर्माम्बिकार्चने ।
यज्ञपत्नीप्रसादश्च भङ्ग इन्द्रमखस्य च ॥१३॥

(२१) वंशी-ध्वनिसे गोपियोंका आनन्द, (२२) देवीकी पूजामें लगी गोपियोंका चीर-हरण करके परिहास, (२३) यज्ञ-पत्नियोंपर कृपा, (२४) इन्द्र-यज्ञको रोक देना,

गोवर्द्धनस्योद्धरणं गोपानां देवतामतिः ।
कृष्णाभिषेको गोदेवैः वरुणान्नन्दमोक्षणम् ॥१४॥

(२५) गोवर्धन-धारण, (२६) गोपोंकी कृष्णमें देव-बुद्धि, (२७) सुरभी तथा इन्द्रके द्वारा श्रीकृष्णका गोविन्दाभिषेक (२८) वरुण-लोकसे बाबा नन्दको छुड़ा लाना ।

सम्भोगो निशि गोपीभिः विप्रलम्भो लसद्वने ।
गोपीविरहगीतानि ताभिः सञ्जल्पनं हरेः ॥१५॥

(२९) रात्रिमें गोपियोंके साथ विहार, (३०) वनमें विप्रलम्भ (गोपी-वियोग) की शोभा, (३१) गोपियोंका श्रीकृष्ण-विरहमें गान, (३२) गोपियोंके साथ श्रीकृष्णका सम्वाद,

रासक्रीडा च ललिता मोक्षो विद्याध्रयक्षयोः ।
व्रजस्थ गोपिकागीतं हतेऽरिष्टे च कंसभीः ॥१६॥

(३३) ललित रास-क्रीड़ा, (३४) विद्याधर सुदर्शन और शङ्खचूड यक्षका मोक्ष, (३५) व्रजकी गोपियोंका (युगल) गीत, (३६) अरिष्टासुरके मारे जानेपर कंसका भयभीत होना,

केशि-व्योमवधश्चैवाक्रूरयानं व्रजंप्रति ।
मथुराकृष्णयानञ्च अक्रूरेणाप्सु हरेः स्तुतिः ॥१७॥

(३७) केशी और व्योमासुरका वध, (३८) अक्रूरका ब्रजको प्रस्थान, (३९) श्रीकृष्णका मथुरा-प्रयाण, (४०) यमुना-जलमें अक्रूर द्वारा श्रीहरिकी स्तुति,

कृष्णस्य मथुरालोकः कंसमल्लरणोद्यमः ।
कृष्णेन मल्लहननं हते कंसे सुरोत्सवः ॥१८॥

(४१) श्रीकृष्णका मथुरानगर-दर्शन, (४२) कंसके मल्लोंका युद्धोद्योग, (४३) श्रीकृष्णके द्वारा मल्लोंका मारा जाना, (४४) कंसके मारे, जानेपर देवताओंका उत्सव मनाना,

चतुश्चत्वारिंशदिमेऽध्यायाः कंसवधेऽङ्घ्रिभिः ॥१९॥

कंस-वध तकके ये चौवालीस आध्यायोंका संक्षिप्त विवरण है।

अब मथुरा-चरितके अध्यायोंका परिचय देते हैं—

कृष्णस्य विद्योपादानमुद्धवस्य व्रजागमः ।
आश्वासनं च गोपीनां कुब्जाक्रूरप्रियं हरेः ॥२०॥

(४५) श्रीकृष्णका विद्योपार्जन, (४६) उद्धवका व्रजमें आना, (४७) गोपियोंको आश्वासन देना, (४८) श्रीकृष्णका कुब्जा तथा अक्रूरको प्रसन्न करना,

संगोऽक्रूरस्य कुरुभिः जरासन्धपराजयः ।
यवनस्यवधोऽध्यायैः सप्तभिर्माथुरं यशः ॥२१॥

(४९) अक्रूरका कौरवोंके पास जाना, (५०) जरासन्धकी पराजय (५१) कालयवनका वध, इन सात अध्यायोंमें मथुरा-चरितका वर्णन है ।

अब द्वारिका-चरितके अध्यायोंका परिचय देते हैं—

कृष्णेऽभिलाषो रुक्मिण्या रुक्मिणोहरणं हरेः ।
रुक्मिणश्च पराभूतिः प्रद्युम्नाच्छम्बरक्षयः ॥२२॥

(५२) रुक्मिणीजीकी श्रीकृष्ण-प्राप्तिकी अभिलाषा, (५३) श्रीकृष्ण-का रुक्मिणी-हरण, (५४) रुक्मीकी पराजय, (५५) प्रद्युम्नके द्वारा शम्बरासुरका वध,

स्यमन्तकस्याहरणं सत्यभामासमुद्वहः ।
कालिन्द्यादि विवाहश्च भौमं हत्वा द्रुमाऽऽहृतिः ॥२३॥

(५६,५७) स्यमन्तक मणिको खोज लाना, सत्यभामासे विवाह (५८) कालिन्दी आदिसे विवाह, (५९) भौमासुरको मारकर कल्पवृक्ष ले आना ।

रुक्मिण्या नर्म रहसि रुक्म्यन्तो नप्तुरुद्वहे ।
बाणेन बन्धनं नप्तुः बाणस्य हरिणा जयः ॥२४॥

(६०) रुक्मिणीके साथ एकान्तमें परिहास, (६१) पौत्र अनिरुद्धके विवाहमें रुक्मीका मारा जाना, (६२) बाणासुरके द्वारा पौत्र अनिरुद्धका बन्धन, (६३) श्रीकृष्ण द्वारा बाणासुर-विजय,

नृगस्य सरटत्वान्तो हलिना यमुनाभिदा ।
काशीशपौण्ड्रकवधः रामेण द्विविदक्षयः ॥२५॥

(६४) नृगका गिरगिट योनिसे छूटना, (६५) बलरामजी द्वारा यमुना-कर्षण (६६) काशिराज और पौण्ड्रकका वध (६७) बलरामजी द्वारा द्विविद-वध।

पराभवं कुरूणां च हरेर्गार्हस्थ्यमद्भुतम् ।
जरासन्धवधे मन्त्रो युधिष्ठिर - समागमः ॥२६॥

(६८) श्रीबलराम द्वारा कौरवोंका पराभव, (६९) श्रीकृष्णका अद्भुत गार्हस्थ्य, (७०) जरासन्ध-वधकी मन्त्रणा, (७१) युधिष्ठिरसे मिलन,

जरासन्धवधो भीमाद्दिग्जयश्चार्जुनादिभिः ।
शिशुपालवधो यज्ञे दुर्योधनपराभवः ॥२७॥

(७२) भीमके द्वारा जरासन्ध-वध, (७३) अर्जुनादि द्वारा दिग्विजय, (७४) राजसूय यज्ञमें श्रीकृष्ण द्वारा शिशुपाल-वध, (७५) दुर्योधनका अपमान,

शाल्वस्ययुद्धं यदुभिः शाल्वस्य हरिणावधः ।
दन्तवक्रस्य सूतान्तः वल्वलान्तश्च सीरिणा ॥२८॥

(७६) यादवोंके साथ शाल्वका युद्ध, (७७) श्रीकृष्ण द्वारा शाल्व-वध (७८) दन्तवक्रका उसके सूत (भाई) के साथ वध, (७९) सीरी-हलधर बलराम द्वारा बल्वल दैत्यका वध,

श्रीदामकृष्णसञ्जल्पः श्रीदाम्नः सम्पदद्भुता ।
सुहृत्सङ्गः कुरुक्षेत्रे कृष्णोद्वाहाभिवर्णनम् ॥२९॥

(८०) श्रीदामा और श्रीकृष्णकी बात-चीत, (८१) श्रीदामाको अद्भुत सम्पत्ति देना, (८२) कुरुक्षेत्रमें सुहृदोंका मिलन, (८३) रानियों द्वारा श्रीकृष्णके बिवाहोंका वर्णन,

वसुदेवस्य यज्ञश्च मृतपुत्रप्रदर्शनम् ।
श्रुतदेवस्य चातिथ्यं वेदस्तुतिनिरूपणम् ॥३०॥

(८४) वसुदेवजीका यज्ञ, (८५) देवकीजीको उनके मृत पुत्र लाकर दिखा देना, (८६) श्रुतदेवका आतिथ्य-स्वीकार, (८७) वेद-स्तुति द्वारा श्रीकृष्णके ब्रह्मत्वका निरूपण,

देवत्रयविभागश्च द्विजपुत्राहृतिस्तथा ।
कृष्णकीर्त्युपसंहार इतीदं द्वारकाकृते ॥३१॥

(८८) तीनों देवता ब्रह्मा, विष्णु, महेश (के गुणोंका) विभाग (८९) मृत द्विज-पुत्रोंको ले आना (९०) श्रीकृष्ण-यशोगाथाका उपसंहार, ये (उनचास) अध्याय द्वारिका-चरितके हैं ।

ऊनचत्वारिंशतोक्तँ अध्यायैः पादवर्णितैः ॥

उनचास अध्यायोंमें इस स्कन्धका एक पाद—उत्तरार्ध वर्णित हुआ है।

॥ दशम स्कन्ध समाप्त ॥

एकादश स्कन्ध

मुक्तिरेकादशस्कन्धेऽध्यायैकत्रिंशतोदिता ।
तत्र कर्मज्ञाननिष्ठाभेदात् प्रकरणद्वयम् ॥ १ ॥

एकादश स्कन्धमें मुक्तिका निरूपण इकतीस अध्यायोंमें किया गया है । उसमें कर्म-निष्ठा और ज्ञान-निष्ठाके भेदसे दो प्रकरण हैं ।

पञ्चाध्यायास्तयोराद्यं तत्राद्ये युगपत् क्षयः ।
विष्णुगुप्ते यदुकुले विप्रशापाद्विरक्तये ॥ २ ॥

उसमें प्रथम पाँच अध्याय कर्मनिष्ठाके हैं। उनमें भी पहिले अध्यायमें श्रीहरिसे रक्षित यदुकुलका विप्रशापसे एक साथ विनाशका वर्णन है जो वैराग्यके लिए है ।

द्वौ चतुष्टयमेको द्वौ प्रश्नाः शेषेषु सोत्तराः ।
ज्ञातुं भागवतान् धर्मान् पुंसो मायां तदत्ययम् ॥ ३ ॥

शेष चार अध्यायोंमें-से द्वितीयमें दो, तृतीयमें चार, चतुर्थमें एक और पञ्चममें दो प्रश्न (कुल मिलाकर नौ प्रश्न) उत्तर सहित हैं। भागवत धर्मको जाननेके लिए, भगवान्‌का स्वरूप, उनकी माया और उस मायासे छूटनेके उपाय जाननेके लिए ये प्रश्नोत्तर हैं।

ब्रह्मकर्मावतारालिमभक्ताप्ति युगस्थितिम् ।
नवप्रश्नान्निमिश्चक्रे तानाचख्युर्नवार्षभाः ॥ ४ ॥

भागवत धर्म, अवतार-समूह, अभक्तकी गति तथा युग-धर्म सम्बन्धी नौ प्रश्न महाराज निमिने किये और ऋषभदेवजीके नव योगेश्वर पुत्रोंने उनके उत्तर दिये।

अब उत्तरका सारांश कहते हैं—

सर्वकर्मार्पणं विष्णो रागद्वेषविवर्जितः ।
मिथ्यार्थदर्शनासक्तिः विपर्यय - विमर्शनम् ॥ ५ ॥

भगवान् श्रीहरिको समस्त कर्म अर्पित कर देना (भागवत-धर्म), रागद्वेषसे रहित रहना (भागवत पुरुष), सब पदार्थोंको मिथ्या देखनेमें आसक्ति-विवेक (माया), विपर्यय—अनात्मामें आत्मा और आत्ममें अनात्माके भ्रमका विमर्शन-मनन (मायासे त्राण),

सर्वत्रानुगतं शुद्धं वेदतन्त्राच्युतार्चनम् ।
पुरुषादिवपुर्लीला कालचक्र परिभ्रमः ॥ ६ ॥

सर्वत्र व्यापक शुद्ध तत्त्व (ब्रह्म), वैदिक तथा तन्त्र-वर्णित रीतिसे श्रीहरिका अर्चन, आदि पुरुषकी अवतार-लीला (अवतारावलि), काल-चक्रका परिभ्रमण (अभक्तका उसमें भटकना),

ध्यानं यागोऽर्चनं स्तोत्रं उत्तराणि नवाऽङ्घ्रिभिः ।

(सतयुगमें) ध्यान, (त्रेतामें) यज्ञ, (द्वापरमें) अर्चन, (कलिमें) स्तोत्र, —(ये युग-धर्म)—इस प्रकार संक्षिप्ततः उत्तरोंका सार है।

धर्मे भागवतेऽभ्यासः पुंभिर्भागवतैः सह ॥ ७ ॥

जितमायस्य धाम स्वमारोढुं भूमिकोत्तरा ।
मायाजयोऽधराभक्तिः ज्ञानकर्मसमुच्चयात् ॥ ८ ॥

पुरुषके लिए स्वधाम (भगवद्धाम) आरोहणके लिए यह उत्तम भूमिका है कि (मायाजयके पश्चात्) भगवद्भक्त पुरुषोंके साथ भागवत धर्मोंका अभ्यास करे। ज्ञान और कर्मके समुच्चयसे मायाजय होता है और अधरा-अलौकिक-भक्ति प्राप्त होती है ।

अवतारकथातोऽतः काम्यत्यागेशकीर्तनम् ।
इति भूमिश्चतसृभिरध्यायानां चतुष्टयम् ॥ ९ ॥

अवतार-कथाका तात्पर्य है कि काम्य (सकाम) भावको त्यागकर श्रीहरिका कीर्त्तन करना चाहिये। इस प्रकार चार भूमिकाओंके वर्णन करनेके लिए चार अध्याय हैं। १ संसारमें मिथ्यात्व-दर्शन, २ तत्त्व-विमर्शसे मायाजय, ३ भक्तोंके साथ भागवत धर्माभ्यास, ४ निष्काम हरि-कीर्त्तन—ये चार भूमिकाएँ हैं ।

वसुदेवाय जायन्तेयोपाख्यानमिदं जगौ ।
मुमुक्षवे द्वारवत्यां नारदस्तद्गृहागतः ॥१०॥

जयन्ती (ऋषभदेवजीकी पत्नी) के पुत्रों—नवयोगेश्वरोंका यह उपाख्यान मोक्षेच्छु वसुदेवजीसे द्वारिकामें उनके घर आये देवर्षि नारदने सुनाया था ।

पाँच अध्याओंका तात्पर्य कहकर अब ज्ञान-निष्ठा प्रकरण प्रारम्भ करते हैं—

विष्णोरभ्यर्थनां दैवैः स्वर्वसेत्युद्धवेन च ।
स्वधाम नयमेत्यूचे षष्ठे सम्वादकारणम् ॥११॥

देवताओंके द्वारा श्रीकृष्णसे प्रार्थना की गयी कि आप अब स्वधाम पधारें। तब उद्धवने भगवान्से कहा कि आप मुझे भी अपने धाम ले चलें। छठे अध्यायमें यह वर्णन श्रीकृष्ण-उद्धव-संवादका कारण रूप है ।

चतुर्द्धात्रीनथैकं द्वौ द्वावेकं चैककं द्विधा।
द्वौ द्विधा त्रींश्चद्धैंकमेकमेकं च सोत्तरान् ॥१२॥

भगवान्ने एक प्रश्नका उत्तर चार प्रकारसे चार अध्यायोंमें दिया है। इसी प्रकार एक प्रश्नका उत्तर तीन अध्यायोंमें, दो-दो प्रश्नोंके उत्तर एक-एक अध्यायोंमें हैं। इस प्रकार दो-दो अध्यायोंके ये दो भाग है। उत्तर-सहित कुल नौ प्रश्न तीन और आधे अध्यायमें है।

प्रश्नान् शेषेषु हित्वान्त्यौ ममाहं लयदर्शनौ।

प्रश्नोंके विवरण यहाँ हैं, शेष अन्तिम दो अध्याय (३०,३१) जिनमें ममत्वलय (यदुवंश-क्षय) और श्रीकृष्णका परमधाम-गमन (अहंलय) छोड़ दिये गये हैं।

अब ऊपर कहे बाईस प्रश्नोंका विवरण देते हैं—

सङ्गत्याग उपायस्य सत्सङ्गासङ्गयोस्सताम् ॥१३॥
भक्तेर्जीवस्य विषयासक्तौ दृष्टेऽपि दूषणे।
हेतोर्हंस-सनन्दादि सम्वादस्योत्तमस्य च ॥१४॥

१ उद्धवकी प्रश्नेच्छा, २ सङ्ग-आसक्ति-त्यागका उपाय, ३ सत्सङ्गसे सत्पुरुषोंका बन्धन-मोक्ष, ४ भक्ति, ५ जीवत्व, ६ दोष दीखनेपर भी विषयोंमें आसक्ति, ७ भगवान हंस तथा सनक - सनन्दनादि-सम्वाद,

श्रेयस्सु ध्यानयोगस्य सिद्धीनां च विभूतिवत्।
वर्णाश्रमादि धर्मस्य ज्ञानादीनां यमादिवत् ॥१५॥

८ उत्तम श्रेय, ९ ध्यान योग, १० सिद्धियाँ, ११ विभूतियाँ, १२ वर्णाश्रम आदि धर्म, १३ ज्ञान विज्ञान-वैराग्य, १४ यम-नियम,

गुणदोषापवादस्य तत्त्वसंख्याव्यवस्थितेः ।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञभेदस्य देहयोगवियोगयोः ।।१६।।

१५ गुण-दोषका अपवाद, १६ तत्त्वोंकी संख्याकी व्यवस्था, १७ क्षेत्र-क्षेत्रज्ञका भेद, १८ शरीरका संयोग-वियोग,

अभिमान निवृत्तेश्च क्रियायोगस्य संस्सृतौ ।
अधिष्ठानस्य भक्तेश्च परस्याः सम्बुभुत्सया ।।१७।।

प्रश्नान् द्वाविंशतिं चक्रे कृष्णं प्रत्युद्धवः क्रमात् ।

१९ अभिमानकी निवृत्ति, २० क्रियायोग, २१ अधिष्ठान, २२ परम पुरुषकी भक्ति,—इनके सम्बन्धमें जाननेकी इच्छासे उद्धवने श्रीकृष्णसे इन बाईस विषयोंके प्रश्न क्रमशः किये ।

अब इनके उत्तरका वर्णन देते हैं—

हेयोपादेय निर्द्धारः स्वाप्ने सुप्तप्रबुद्धवत् ।।१८।।
मिथः कृष्णकथासक्ताः प्रेम्णैव हरिदासता ।
स्वसृष्टाऽनुप्रविष्टोऽसौ रजः सम्मिश्रसत्वता ।।१९।।

१ हेय (त्याज्य) तथा उपादेय (उपयोगी) का ठीक निर्णय, २ स्वप्नमें सोये और जागतेकी स्थिति (आसक्त और अनासक्त), ३ परस्पर श्रीकृष्णकी चर्चा, ४ केवल प्रेमसे—कामना-रहित भगवानका दास्य, ५ अपने बनाये हुओंमें वह निर्माता ही जीव रूपसे प्रविष्ट है, ६ रजोगुणसे मिली सात्त्विकता (अर्चा-सत्सङ्गादिमें क्रियाशीलता),

गुणचित्तोभयत्यागो भक्तिरव्यभिचारितः ।
अरूपचिन्तनं रूपैः ध्यातृध्येयसमानता ।।२०।।

७ गुण और चित्त दोनोंका त्याग, ८ अव्यभिचारिणी (नैष्ठिकी) भक्ति, ९ उपायों द्वारा निराकारका चिन्तन, १० ध्याता और ध्येयकी समानता,

ततो तत्रोत्कटं सत्वं कर्मत्यागः शनैः शनैः ।
द्वे हेये द्वे उपादेये गुणदोषावभिद्‌भिदौ ॥२१॥

११ उसमें प्रबल सत्त्वगुणका उदय, १२ धीरे-धीरे कर्मका त्याग (धर्मादिसे भी उपरामता), १३ ज्ञानादि और यज्ञादिमें भी दो हेय और दो उपादेय, १४ अन्ततः गुण-दोषके भेदको ही न जानना,

कर्माणि ज्ञानभक्त्योर्न सा सा संख्याप्रकल्पनात् ।
स्वतः सिद्धः पुमान्नान्यत् मनोगन्त्रभिमान्यजः ॥२२॥

१५ ज्ञान और भक्ति कर्म नहीं हैं, १६ तत्त्व-प्रसंख्यानकी वह-वह संख्या नाना मतोंसे कल्पित है, १७ स्वतः सिद्ध (स्वयं प्रकाश) पुरुष क्षेत्रज्ञसे भिन्न दूसरा क्षेत्र नहीं है, १८ (देहके संयोग-वियोगका हेतु) मनकी गतिके अभिमानके कारण है,

मनः शत्रुजयः सम्यक् प्रतिमादिष्वजार्चनम् ।
पुमान्प्रकृत्योपगूढो विश्वमूर्त्तीशपूजनम् ॥२३॥
पादैर्द्वाविंशतिर्विष्णोरुत्तराण्युद्धवं प्रति ।

१९ मनरूपी शत्रुको भली प्रकार जीतना, २० प्रतिमा सूर्य, जल, आदिमें भगवान्‌की पूजा, २१ प्रकृतिमें उसके द्वारा छिपा अधिष्ठानरूप पुरुष, (२२) विश्वमूर्तिरूप परमेश्वरकी पूजा।

इस प्रकार श्लोकोंके बाइस चरणोंमें उद्धवके प्रति श्रीकृष्णके उत्तर साररूपमें दिये गये है।

गुरुभिः पञ्चविंशत्या लोकतत्त्वपरीक्षणे ॥२४॥
हीनमध्यमोत्तमैरष्ट नवाष्टाभिस्त्रिधैकधा ।
आत्मतत्त्वपरीक्षायां चतुर्धेत्याद्यमुत्तरम् ॥२५॥

(उद्धवके प्रश्नोंके) पहिले उत्तरके चार विभाग हैं—(इसमें अवधूत ब्राह्मणने) पच्चीस गुरुओंके द्वारा लोक-तत्त्वकी परीक्षा की। यह हीन, मध्यम तथा उत्तमके भेदसे तीन प्रकारका है। आठवें और नवें अध्यायमें इसका निरूपण है। सप्तम, अष्टम, नवममें इसका क्रमसे वर्णन है। आत्म-तत्त्वकी परीक्षामें वह एक ही प्रकारका है। (वह दसवें अध्यायमें है)।

ऋण्यनृण्याश्रमद्वन्द्वभेदेन द्वादशं द्विधा ।
व्यवस्थेति तथा वेदोऽपीतिपञ्चदशं द्विधा ॥२६॥

आश्रमोंमें दो भेद हैं—एक ऋणी (ब्रह्मचारी-गृहस्थ ऋषि, पितर, देवताओंके ऋणी हैं)। (वानप्रस्थ, संन्यासी) ऋणी नहीं हैं। इस भेदसे उत्तर देनेके क्रमका बारहवें प्रश्नका उत्तर दो भागका—दो अध्यायोंका (सत्रहवें-अठारहवें अध्यायमें) है। पन्द्रहवें प्रश्नका उत्तर भी दो प्रकारका दो अध्यायों (बीस और इक्कीसमें) है; क्योंकि व्यवस्था ऐसी है और वही वेदमें भी है—यह उत्तर दो भागमें हो गया है।

भिक्षुगीतस्य सांख्यस्य गुणलक्ष्यैलगीतयोः ।
उक्तयोक्तं मनसोऽरित्वं बलं भेदो रणे जयः ॥२७॥

मनके शत्रु होनेके कारण उसका बल, उसमें भेद डालना, उससे युद्ध और उसपर विजय क्रमशः भिक्षुगीत, सांख्यका वर्णन, गुणोंका लक्षण ऐल गीतमें वर्णित किया गया है।

ऊनविंशं चतुर्धैव चतुर्भिर्द्वादशोत्तरैः ।
पञ्चद्वादशभिः षड्भिः षड्त्रयोविंशतिस्ततः ॥२८॥

उन्नीसवें प्रश्नमें मनोजयका उपाय पूछा गया था, उसका उत्तर चार भेद करके (सत्ताइसवें श्लोकमें) दिया गया। इस प्रकार चार प्रश्नोंके उत्तर बारह अध्यायोंमें दिये गये हैं। पाँच प्रश्नोंके उत्तर बारह अध्यायोंमें और छः प्रश्नोंके उत्तर छः अध्यायोंमें दिये गये। इस रीतिसे तेइसवें अध्याय तक ये उत्तर हुए।

निःसङ्गत्वे गुणत्यागे भक्तिदार्ढ्येऽपकर्मणि ।
तत्त्वज्ञाने चोपयोगात्त्रिद्विद्वित्रिमेलनम् ॥२९॥

निःसंगताके वर्णनके लिए तीन अध्याय, गुणोंके त्यागके लिए दो अध्याय, भक्तिकी दृढ़ताके लिए दो अध्याय, अपकर्मोंके वर्णनके दो अध्याय और तत्त्वज्ञानके वर्णनके लिए तीन अध्यायोंका उपयोग किया गया है।

तद्धेतुष्वपि निष्कम्पो निःसङ्गोऽच्छेदलेपकः ।
विशोधको मलत्यागी त्यक्तो विक्रिययाऽभिदः ॥३०॥

कम्प-संगादिके कारण रहते भी पुरुष पर्वतके समान निष्कम्प रहे, असंग रहे (वायुके समान), भेद मिटानेवाला रहे (आकाशके समान), शुद्ध करनेवाला रहे (जलके समान), मलिनताका त्याग करनेवाला रहे (अग्निके समान), त्याग करनेपर भी निर्विकार रहे (चद्रन्माके समान), अभेद-एकरस रहे (सूर्यके समान),

निःस्नेहो दिष्टभुक् क्षोभहीनो रूपाप्रलोभितः ।
सारग्राह्यस्पर्शमूढो निर्लोभो गीत्यवञ्चितः ॥३१॥

(कपोतसे सीखकर) स्नेहहीन, (अजगरके समान) भाग्यसे प्राप्त आहारसे सन्तुष्ट, (समुद्र जैसा) क्षोभहीन, (पतङ्गसे सीखकर) रूपसे प्रलुब्ध न होना, (मधुमक्खी जैसा,) सारग्राही, (हाथीसे सीखकर) स्पर्शसे मूढ़ न होना, (मधु निकालने वालेसे सीखकर) निर्लोभ, (हिरनसे सीख) गीतसे अनासक्त रहना,

रसामूढो विमुक्ताशोऽपरिग्राह्यभिमानमुक् ।
एकः एकमनाः गुप्तसिद्धौकाः धृतनिश्चयः ॥३२॥

(मछलीसे सीखकर) रससे मूढ़ न होना, (पिंगलाके समान) आशा-त्यागी, (चीलसे सीखकर) अपरिग्रही, (बालकके समान) अभिमान रहित, (कुमारीकी चूड़ीके समान) एकाकी, (बाण बनाने वालेके समान) एकाग्रमन, (सर्पके समान) गुप्त तथा अनायास प्राप्त घरमें रहनेवाला, (मकड़ीके समान) दृढ़निश्चयी,

ईशस्यैकस्य कर्त्तृत्वे ध्यातुर्ध्येयात्मनास्थितौ ।
देहास्वत्वे च पुरुषः क्रियते गुरुभिः क्रमात् ॥३३॥

(मकड़ीके समान ही) एकमात्र ईश्वरको ही जगत्कारण समझना (भृङ्गी कीटसे शिक्षा लेना) ध्याता ही ध्येयके रूपमें स्थित है, अपने शरीरसे सीखकर दृढ़निश्चय हो जाना—इस प्रकार विभिन्न गुरुओंसे शिक्षा ग्रहण करनेका क्रमशः वर्णन है ।

उपायत्वेऽन्तरङ्गास्ते क्रमात् त्रिस्कन्धता ततः ।
देहस्य पृथगुद्देशः श्रैष्ठयान्नेदिष्ठताकृतात् ॥३४॥

उपायके रूपमें आसक्ति-त्यागमें (ये ऊपरके गुण) अन्तरङ्ग हैं, अतएव इनमें क्रमसे (हीन, मध्यम, उत्तम) यह तीन भेद है। इसमें देहको श्रेष्ठ होनेके कारण पृथक उद्देश्य बनाया गया है। दूसरे गुरुओंको इतना नहीं, क्योंकि देह और (अन्योमें सन्निकृष्ट—विप्रकृष्टका अन्तर है।)

स्वोत्तरात्पृथगुद्दिष्टौ द्वितीयैकोनविंशकौ ।
प्रश्नौ प्रागुत्तरेणापि योगं बोधयितुं कृतौ ॥३५॥

उन्नीसवाँ (अभिमान-निवृत्तिका) प्रश्न और दूसरा (सत्सङ्ग-असङ्ग-का) प्रश्न। इनका उत्तर भगवान्ने स्वयं पृथक् अध्यायमें दिया। योगका सम्बन्ध पहिले अध्यायके उत्तरसे भी है, यह सूचित करनेके लिए ऐसा किया गया है।

प्रथमः पञ्चमः षष्ठो दशमोऽथ त्रयोदशः ।
एकविंश इति प्रश्नाः षडुत्थापन पूर्वकाः ॥३६॥

पहिला, पाँचवाँ, छठा, दशवाँ, तेरहवाँ और इक्कीसवाँ—ये छः प्रश्न उत्थापनपूर्वक अर्थात् पहिले प्रसंगकी प्रेरणासे उठे हैं। (शेष उद्धवने स्वयं किये हैं।)

निःसङ्गता कथं कीदृक् तन्निर्वाहश्च यैर्यथा ।
भक्तेर्यो विषयस्तस्मिन् सत्यन्यस्मिन् रतिः कथम् ॥३७॥

असङ्गता कैसे होती है, कैसी होती है, उसका निर्वाह जिनके द्वारा और जैसे होता है, भक्तिका जो विषय भगवान् है, वे अपनेसे भिन्न—अन्य हैं तो अन्यमें प्रीति कैसे होगी।

सा कथं भक्तितुल्यं किं कथं भक्तिर्गुणोज्झिते ।
यैर्यैः कामार्थ धर्मेषु यैर्मोक्षेऽन्तर्बहिर्मुखैः ॥३८॥

वह निःसङ्गता भक्तिके समान कैसे हो सकती है। निर्गुणमें भक्ति क्या होगी, कैसे होगी। काम, अर्थ, धर्ममें—अन्तर्मुख और बहिर्मुख लोगों द्वारा जिन-जिनके द्वारा भक्ति हुई, उनका वर्णन।

ते कीदृशाः श्रुतिर्भक्तिपरा च स्मृतयः कथम् ।
कीदृक् भक्तः कथं दौस्थ्यमभिमानक्षयः कथम् ॥३९॥

वे श्रुतियाँ भक्तिपरायण कैसी हैं, स्मृतियाँ (भक्तिपरायण) कैसे हैं, भक्त कैसे होते हैं, अत्यन्त कठिनतासे स्थिति कैसे होती है, अभिमानका नाश कैसे होता है। (यह सब विभिन्न अध्यायोंमें वर्णित है)।

किं कर्मज्ञानभक्तीनां सूचितानां पुनः पुनः ।
सर्वोपदेशसाराणां स्वरूपमिति संगतिः ॥४०॥

कर्म, ज्ञान और भक्तिको बार-बार सूचित करनेसे क्या लाभ। (यह एकादश स्कन्ध) सब उपदेशोंके सारांशका स्वरूप है—यही (उचित) संगति है।

॥ एकादश स्कन्ध समाप्त ॥

द्वादश स्कन्ध

आश्रयो द्वादशस्कन्धे त्रयोदशभिरीरितः ।
आश्रयश्च परं ब्रह्म परमात्मा रमापतिः ॥ १ ॥

द्वादशस्कन्धके तेरह अध्यायोंमें आश्रय तत्त्वका वर्णन किया गया है। वह आश्रय परम ब्रह्म परमात्मा श्रीलक्ष्मीनाथ नारायण ही हैं।

यतः प्रपञ्चधीस्तत्र सर्पे स्रग्धीरिवाश्रिता ।
उपादेयानुपादेयावाश्रयाश्रयिणौ च तौ ॥ २ ॥

जिस(आश्रयतत्त्व)में प्रपञ्च(जगत्)बुद्धि सर्पमें मालाके भ्रमके समान हो रही है, उपादेय और अनुपादेयकी बुद्धि है। आश्रय और आश्रय लेनेवाला भी वही है। (तात्पर्य है कि आश्रय-आश्रयी भेदसे दो प्रकरण इस स्कन्धमें हैं।)

अतः चतुर्भिरध्यायैरनुपादेयतोदिता ।
उत्तरोत्तर दुस्थत्वात्स्थापकानां: स्थितेरपि ।। ३ ।।

अतः चार अध्यायोंमें अनुपादेयता कही गयी है। उत्तरोत्तर इनमें स्थिति कठिन है अथवा स्थापककी स्थितिका इनमें वर्णन है। (राजाओंका दौर्बल्य प्रथम अध्यायमें, आयुबलादि स्थिति द्वितीय अध्यायमें),

युगे युगेऽन्यथाभावात् कालग्रस्ततया तथा ।
उपादेयत्वमेकेन परीक्षितफलदर्शनात् ।। ४ ।।

युग-युगमें भिन्न-भिन्न भाव (तृतीय अध्यायमें), सबका कालग्रस्त होनेसे यह भाव परिवर्तन (चतुर्थ अध्यायमें) और एक अध्याय (पञ्चम) में परीक्षितकी गति-मोक्षका वर्णन करनेसे उपादेयका प्रतिपादन है।

श्रवणं मननं ध्यानं चेत्युपादानहेतवः ।
तत्र श्रवणसिद्ध्यर्थं द्वाभ्यां शब्दस्य सम्भवः ।। ५ ।।

उपादेय तत्त्वकी प्राप्तिके कारण हैं श्रवण, मनन और ध्यान। इनमें-से श्रवणकी सिद्धिके लिए (छठे और सातवें) दो अध्यायोंमें वेदोंके प्राकट्यक वर्णन है।

वेदोपवेदभिन्नस्य मार्कण्डेयकथा त्रिभिः ।
विष्णुमायाशिवेक्षाभिर्भिन्ना मननसिद्धये ।। ६ ।।

बेद, उपवेद (पुराणादि) से पृथक् आठवें, नौवें और दसवें तीन अध्यायोंमें मार्कण्डेयजीकी कथा है। इसमें शंकरजीके दर्शनसे विष्णुमायाकी निवृत्तिका वर्णन है। यह कथा मननकी सिद्धिके लिए है।

मूर्तेस्तत्त्वं सूर्यगत्त्वमेकेन ज्ञानसिद्धये ।
पुराणार्थोपसंहार एकेनैकेन तद्भिदा ।। ७ ।।

मूर्तिका तत्त्व और सूर्यव्यूहका वर्णन एक अध्याय (ग्यारहवें) में ज्ञानकी सिद्धि (इनका ज्ञान कराने) के लिए है। पुराणोंका स्वरूप तथा ग्रन्थका उपसंहार बारहवें और तेरहवें अध्यायमें अन्य पुराणोंसे श्रीमद्भागवतका भेद—श्रेष्ठत्व बतलानेके लिए है।

अष्टादश दश त्रिंशत् त्र्याधिका नवविंशतिः ।
षड्विंशतिर्दशनवपञ्चदशभिर्विंशतिस्त्रिभिः ॥ ८ ॥
चतुर्भिश्चाथ नवतिरेकत्रिंशत त्रयोदश ।
इति भागवतेऽध्याया एकत्रिंशच्छतत्रयम् ॥ ९ ॥

(प्रथम स्कन्धमें) अठारह, (द्वितीयमें) दस, (तृतीयमें) तैंतीस, (चतुर्थमें) उन्तीस, (पञ्चममें) छब्बीस, (षष्ठमें) उन्नीस, (सप्तममें) पन्द्रह, (अष्टममें) तेइस, (नवममें) चौबीस, (दशममें) नब्बे, (एकादशमें) इकतीस, और (द्वादशमें) तेरह—इस प्रकार श्रीमद्भागवतमें कुल तीन सौ इकतीस अध्याय हैं* ।

एकादि नियमेनैतानभ्यसेच्छक्तितोऽन्वहम् ।
वक्ता श्रोतर्य्यप्यश्रोता वक्तर्य्यन्यत्र चिन्तकः ॥१०॥

अपनी शक्तिके अनुसार एक दिनसे लेकर जितने दिनमें सम्भव हो—प्रतिदिन नियमपूर्वक श्रीमद्भागवतके इन अध्यायोंका अभ्यास करे। श्रोता हों तो वक्ता होकर सुनावे। वक्ता हों तो स्वयं श्रोता बनकर सुने। दोनों सुविधा न हों तो अकेले चिन्तन करे।

शास्त्र स्कन्धे प्रकरणेऽध्याये वाक्ये पदेऽक्षरे ।
गुरूपदिष्टो योऽर्थस्तं विमृशन्विष्णुतत्परः ॥११॥

सम्पूर्ण शास्त्र—ग्रन्थ, स्कन्ध, प्रकरण, अध्याय, वाक्य, पद और अक्षर—इन सातोंके सम्बन्धमें गुरुपरम्परासे उपदिष्ट अर्थका विचार करता हुआ विष्णु परायण रहे।

एकं तेजस्त्रिधा यद्वत्सूर्यमण्डलरश्मिभिः ।
एकं ब्रह्म तथा तद्वद्विष्णुमायात्मभिर्मतम् ॥१२॥

जैसे एक ही तेज सूर्य (अधिदेवता), मण्डल (पिण्ड) और किरणोंके रूपमें तीन प्रकारका है, वैसे एक ही ब्रह्म विष्णुमायासे तीन रूपोंमें भासमान समझना चाहिये।

---

* श्रीमद्भागवतमें स्कन्धोंकी अध्याय-संख्याके अन्तरके सम्बन्धमें नोट उन स्थानोंपर ही दे दिये गये हैं। वर्तमान प्रतियोंमें अध्यायोंकी कुल संख्या ३३५ हैं।

मण्डलान्निर्गते सूर्येऽनेकत्वं रश्मिता यथा ।
मायया निर्गते विष्णौ तथाऽनेकत्वमात्मता ॥१३॥

जैसे सूर्यमण्डलसे निकलनेपर किरणोंमें अनेकता आ जाती है, ऐसे ही भगवान् नारायणमें मायासे जगत्में आनेपर जीवरूप अनेकता आ गयी है।

यथा नयनसम्बन्धाद्द्रष्टारो रश्मयो रवेः ।
तथा ज्ञातार आत्मानो देहसम्बन्धतो हरेः ॥१४॥

जैसे नेत्रका सम्बन्ध होनेसे सूर्य और किरणोंके हम देखनेवाले हो जाते हैं (वस्तुतः नेत्राधिदेवताके रूपमें सूर्य ही देखता है), ऐसे ही शरीरके सम्बन्धसे जीव श्रीहरिका ज्ञाता होता है, (अन्यथा जीव भी वही हैं। उनमें ज्ञाता-ज्ञेय-भाव नहीं है) ।

विशेषस्तु यथात्मानश्चेतनत्वादुपासते ।
विष्णुं मायान्तरप्राप्तदुरवस्थानिवृत्तये ॥१५॥

यह जीव विशेष हैं, ये मायासे परमात्मासे पृथक् हो गये हैं। अतः चेतन होनेके कारण अपनी दुरवस्थाको दूर करनेके लिए श्रीहरिकी उपासना करते हैं।

उपासनं कर्मभक्तिज्ञानयोगस्त्रिधा क्रमात् ।
येषां धीर्विषयेऽदोषा सदोषा नैव तैः कृतम् ॥१६॥

उपासना क्रमशः तीन प्रकारकी होती है—कर्मके द्वारा, भक्ति और ज्ञानयोग। जिनकी बुद्धि विषयोंमें दोष नहीं देखती, उनके लिए कर्मयोग है। जिनकी बुद्धि विषयोंमें दोष देखती है, उनके लिए भक्तियोग और जिनमें दोनों नहीं—विषय-दृष्टि ही नहीं, उनके लिए ज्ञानयोग है।

कर्मणामर्पणं विष्णौ विष्णोर्वार्ता परस्परम् ।
विजने चिन्तनं विष्णोर्योगानां लक्षणं क्रमात् ॥१७॥

(कर्मयोग, भक्तियोग और ज्ञानयोग) इन योगोंका क्रमशः लक्षण यह है—कर्म सब भगवान्को अर्पण करना (कर्मयोग है), परस्पर

श्रीहरिकी ही चर्चा (भक्तियोग है), एकान्तमें श्रीनारायणका चिन्तन (ज्ञानयोग है)।

इति भागवतस्यानुक्रमणी रमणीकृता।
विदुषा बोपदेवेन विद्वत्केशवसूनुना ॥१८॥

श्रीमद्भागवतकी यह अनुक्रमणिका पूर्ण हुई। विद्वद्वर्य पं० केशवजी-के पुत्र विद्वान् बोपदेवने स्वात्मानन्दके लिए सकी रचना की।
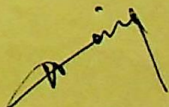
हरिलीलेति नामेयं हरिभक्तैर्विलोक्यताम्।
अस्या विलोकनादेव हरौ भक्तिर्विवर्धते ॥१९॥

इस अनुक्रमणीका नाम 'हरिलीला' है। श्रीहरिके भक्त इसे देखें; क्योंकि इसको देखने (पढ़ने) मात्रसे भगवद्भक्ति बढ़ती है;

॥ हरि-लीला सम्पूर्ण ॥